BAMM(N)-120

भारतीय संगीत का परिचय एवं सिद्धांत I– एवं प्रयोगात्मक माइनर–प्रथम सेमेस्टर

संगीत में स्नातक (बी0ए0)

संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
मानविकी विद्याशाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

BAMM(N)-120

भारतीय संगीत का परिचय एवं सिद्धांत I– एवं प्रयोगात्मक

संगीत में स्नातक (बी0ए0)–प्रथम सेमेस्टर

संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग

मानविकी विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
तीनपानी बाईपास रोड, ट्रान्सपोर्ट नगर के पीछे,
हल्द्वानी – 263139
फोन नं0 : 05946–286000/01/02
फैक्स नं0 : 05946–264232,
टोल फ्री नं0 : 18001804025
ई–मेल : **info@uou.ac.in**
वेबसाईट : **www.uou.ac.in**

अध्ययन समिति

अध्यक्ष
कुलपति
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

संयोजक
निदेशक
मानविकी विद्याशाखा,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

प्रो0 पंकजमाला शर्मा(स.)
पूर्व विभागाध्यक्ष–संगीत विभाग
पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़

डॉ0 विजय कृष्ण(स.)
पूर्व विभागाध्यक्ष–संगीत विभाग
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

डॉ0 मल्लिका बैनर्जी(स.)
संगीत विभाग,
इग्नू, दिल्ली

प्रदीप कुमार(स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

द्विजेश उपाध्याय(आ.स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

जगमोहन परगांई(आ.स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

अशोक चन्द्र टम्टा(आ.स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

प्रकाश चन्द्र आर्या(आ.स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

पाठ्यक्रम संयोजन

प्रदीप कुमार
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

द्विजेश उपाध्याय
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

जगमोहन परगांई
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

अशोक चन्द्र टम्टा
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

प्रकाश चन्द्र आर्या
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

प्रूफ रिडिंग एवं फार्मेटिंग

प्रदीप कुमार
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग, ,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

इकाई लेखन

1.	डॉ विजय कृष्ण	इकाई 1
2.	डॉ0 निर्मला जोशी	इकाई 2
3.	श्री हरीश चन्द्र पन्त	इकाई 3
4.	डॉ0 निर्मला जोशी	इकाई 4
5.	श्री हरीश चन्द्र पन्त	इकाई 5
6.	डॉ महेश पाण्डे	इकाई 6

कापीराइट : @उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
संस्करण : सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति
प्रकाशन वर्ष : जुलाई 2023
प्रकाशक : उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल–263139
ई–मेल : books@uou.ac.in

नोट – इस पुस्तक की समस्त इकाईयों के लेखन तथा कॉपीराईट संबंधी किसी भी मामले के लिए संबंधित इकाई लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद का निस्तारण सत्र न्यायालय–हल्द्वानी अथवा उच्च न्यायालय–नैनीताल में किया जाएगा। इस सामग्री के किसी भी अंश को उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अथवा मिमियोग्राफी चक्रमुद्रण द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

BAMM(N)-120

भारतीय संगीत का परिचय एवं सिद्धांत I– एवं प्रयोगात्मक संगीत में स्नातक (बी0ए0)–प्रथम सेमेस्टर

इकाई 1– भारतीय संगीत की अवधारणा ।	पृष्ठ 1–10
इकाई 2– भारतीय संगीत का संक्षिप्त इतिहास।	पृष्ठ 11–19
इकाई 3– परिभाषा (श्रुति, स्वर, सप्तक, वर्ण , अलंकार, राग, आलाप, लय, लयकारी, मात्रा, ताल, ठेका, आवर्तन, सम, ताली, खाली व विभाग)।	पृष्ठ 20–31
इकाई 4– संगीतज्ञों का जीवन परिचय (पं0 वी0एन0 भातखण्डे, पं0 वी0 डी0 पलुस्कर एवं सदारंग–अदारंग)।	पृष्ठ 32–37
इकाई 5– भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति का परिचय ; राग यमन का परिचय एवं छोटा ख्याल/रजाखानी गत को तानों/तोड़ों सहित लिपिबद्ध करना ।	पृष्ठ 38–46
इकाई 6– भातखण्डे काललिपि पद्धति का परिचय ; तीनताल के ठेके एवं उसको दुगुन लयकारी सहित लिपिबद्ध करना।	पृष्ठ 47–55

इकाई 1 – भारतीय संगीत की अवधारणा

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 संगीत की उत्पत्ति
1.4 संगीत के तत्व
 1.4.1 स्वर 1.4.2 लय
1.5 संगीत की विधाएं
 1.5.1 शास्त्रीय संगीत 1.5.2 उपशास्त्रीय संगीत
 1.5.3 सुगम संगीत 1.5.4 लोक संगीत
1.6 संगीत के अंग
 1.6.1 गायन
  1.6.1.1 ख्याल 1.6.1.2 ध्रुवपद
  1.6.1.3 ठुमरी, दादरा, कजरी, चैती व होली
 1.6.2 वादन
  1.6.2.1 तत वाद्य 1.6.2.2 सुषिर वाद्य
  1.6.2.3 अवनद्ध वाद्य 1.6.2.4 घन वाद्य
 1.6.3 नृत्य
1.7 संगीत की उपयोगिता
1.8 सारांश
1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (बी0ए0एम0एम0(एन)–120) प्रथम सेमेस्टर के प्रथम खण्ड की पहली इकाई है। पहले शायद आपने संगीत के बारे में सुना होगा या आप संगीत को समझते होंगे। दूसरे शब्दों में कहे तो आप किसी ना किसी रुप में संगीत से जुड़े होंगे।

प्रस्तुत इकाई के माध्यम से आप संगीत के बारे में जानेंगे। इस इकाई में संगीत के विभिन्न पहलुओं, जैसे – संगीत की उत्पत्ति, संगीत के तत्व, संगीत की विधाएं, संगीत के अंग व संगीत की उपयोगिता के बारे में बताया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह जान पाऐंगे कि संगीत किसे कहते हैं? आप संगीत के अव्यवों का ज्ञान लेकर अपने संगीत पथ में आगे बढ़ सकेंगे तथा यह ज्ञान आपके इस कार्य में सहायक सिद्ध होगा। भविष्य में आपको संगीत की विधा एवं अंगों का अपनी रुचि के अनुसार चयन करने में सुविधा होगी।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :–

- संगीत के विभिन्न पहलुओं से परिचित हो पाऐंगे।
- भारतीय संगीत के प्रति आकर्षित होकर दूसरों को भी संगीत सीखने के लिए प्रेरित कर सकेंगे।
- अपनी रुचि के अनुसार, अपने भविष्य हेतु संगीत के अंग एवं विधा का आसानी से चयन कर सकेंगे।

1.3 संगीत की उत्पत्ति

प्राचीन ग्रन्थों में संगीत को गायन, वादन एवं नृत्य का समग्र रूप माना है, जो कि शारंगदेव के संगीत रत्नाकर ग्रन्थ में दिए गए श्लोक से स्पष्ट है :

"गीतं वाद्यं नृत्यं च त्रयं संगीत मुच्यते"।

वैसे गायन, वादन एवं नृत्य का एक दूसरे से स्वतंत्र अस्तित्व है। परन्तु गायन के साथ स्वरवाद्य जैसे सारंगी अथवा वायलिन एवं अवनद्ध वाद्य – तबला अथवा पखावज संगति के रूप में प्रयोग होता है। प्राचीन समय में इन तीनों का प्रदर्शन एक साथ किया जाता था। नृत्य, गायन, स्वर वाद्य वादन एवं अवनद्ध वाद्य वादन पर आधारित था, परन्तु अब इन तीनों का स्वतंत्र अस्तित्व स्थापित हो चुका है। सामान्यतः संगीत को शास्त्रीय संगीत ही समझा जाता है परन्तु संगीत के अन्तर्गत संगीत की सभी विधाएं – शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत एवं लोक संगीत आती है जिनकी चर्चा संगीत की विधायें, के अन्तर्गत की जाएगी।

भारतीय परम्परा एवं मान्यता के अनुसार संगीत की उत्पत्ति वेदों के निर्माता ब्रह्मा से मानी गई है। ब्रह्मा द्वारा भगवान शंकर को यह कला प्राप्त हुई। भगवान शंकर अथवा शिव ने इसको देवी सरस्वती को दिया, जो ज्ञान एवं कला की अधिष्ठात्री देवी कहलाई। मूर्तियों एवं चित्रों में भी देवी सरस्वती को आपने वीणा एवं पुस्तक के साथ देखा होगा। नारद ने संगीत कला का ज्ञान देवी सरस्वती से प्राप्त कर स्वर्ग में गंधर्व, किन्नर एवं अप्सराओं को इसकी शिक्षा प्रदान की। यहीं से इस कला का प्रचार पृथ्वी लोक पर ऋषियों द्वारा किया गया।

आदि काल में मानव हर्ष एवं उल्लास की अभिव्यक्ति, नृत्य एवं विभिन्न प्रकार की ध्वनियों को आवाज के माध्यम से निकाल कर करता था। मानव के विकास एवं सभ्यता के विकास के साथ इन ध्वनियों की पहचान, संगीत के लिए की गई जिनके विभिन्न प्रयोग के द्वारा संगीत की रचना की जाने लगी।

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि संगीत की उत्पत्ति वेदों के निर्माता ब्रह्मा से मानी गई है। अतः यह कहा जा सकता है कि संगीत का जन्म वैदिक युग में हुआ और इसका व्यवस्थित स्वरूप में विकास भी इसी काल में हुआ। सामवेद की ऋचाओं के गान को सामगान कहा गया। वैदिक ऋचाओं का गान ऋषियों द्वारा किया गया और यहीं से संगीत की विकास यात्रा आरम्भ हुई, जिसका पूर्ण परिचय आप आगे चलकर संगीत का इतिहास, के अध्ययन से प्राप्त करेंगे।

1.4 संगीत के तत्व

स्वर एवं लय संगीत के मूल तत्व हैं। स्वर एवं लय के सुन्दर संयोजन को ही संगीत कहते हैं। विभिन्न स्वर समूहों के विभिन्न लय के प्रयोग से संगीत की रचना होती है। संगीत को समझने के लिए स्वर एवं लय को समझना आवश्यक है। स्वर, ध्वनि से प्राप्त होता है एवं लय पूरी सृष्टि में विद्यमान है। अतः स्वर एवं लय दोनों प्रकृति में विद्यमान हैं। विद्वानों द्वारा प्रकृति से स्वर एवं लय को पहचान कर संगीत की रचना की गई। आइए अब स्वर और लय को समझें :

<u>1.4.1 स्वर</u> – फारसी के विद्वान के अनुसार हजरत मूसा जब पहाड़ों पर प्रकति का आनन्द ले रहे थे, उस समय आकाशवाणी हुई कि अपना असा (फकीरो का डंडा) पत्थर पर मार। पत्थर पर चोट से पत्थर के सात टुकड़े हुए और हर पत्थर से पानी की धारा निकली जिससे सात प्रकार की आवाजें निकली एवं इसके आधार पर हजरत मूसा ने सात स्वरों की रचना की। एक अन्य मत के अनुसार पहाड़ों पर एक मूसीकार नाम का पक्षी होता है जिसकी चोंच में सात सुराख होते हैं। इन्हीं सात सुराखों से निकलने वाली ध्वनि से सात स्वर स्थापित हुए।

संगीत दर्पण के लेखक दामोदर पंडित के अनुसार सात स्वरों की उत्पत्ति पशु–पक्षियों की आवाजों से निम्न प्रकार मानी गई है:–

मोर	–	**'सा'** अथवा *षडज*
चातक	–	**'रे'** अथवा *ऋषभ*
बकरा	–	**'ग'** अथवा *गन्धार*
कौआ	–	**'म'** अथवा *मध्यम*
कोयल	–	**'प'** अथवा *पंचम*
मेढक	–	**'ध'** अथवा *धैवत*
हाथी	–	**'नी'** अथवा *निषाद*

उपरोक्त मान्यताओं का कोई ठोस ऐतिहासिक एवं वैज्ञानिक सन्दर्भ प्राप्त नहीं होता, परन्तु यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि प्रकृति में व्याप्त ध्वनियों से ही स्वर स्थापित किए गए चाहे वो जल धाराएं हो, नदियों की कल–कल ध्वनियॉ हो अथवा प्रकृति में उपस्थित पशु–पक्षियों की आवाजें।

स्वर, ध्वनि का वह स्वरूप है जिसमें नियमित कंपन होता है। स्वर, कर्णप्रिय अथवा कानों को अच्छा लगता है एवं इसको ही हम संगीत हेतु प्रयोग करते हैं। स्वर को अन्य शब्दों में सांगीतिक ध्वनि भी कह सकते हैं। इसके विपरीत यदि ध्वनि में कंपन अनियमित होते हैं तो यह ध्वनि कर्ण कटु अथवा कानों को अच्छी नहीं लगती है, जिसे हम शोर कहते हैं। इस प्रकार की ध्वनि को असांगीतिक ध्वनि कहते हैं एवं इस प्रकार की ध्वनि को संगीत में प्रयोग नहीं किया जाता है।

स्वर के बाद में विद्वानों द्वारा सात स्वर जिसको सप्तक कहा गया एवं एक सप्तक में बाद में कोमल एवं तीव्र स्वरों की पहचान कर बारह स्वर भी स्थापित किए गए। इसी सप्तक में बाईस श्रुतियॉ भी स्थापित की गई। श्रुति, स्वर का वह सूक्ष्म रूप है जो कि एक दूसरे को सुनकर अलग से पहचाना जा सकता है। शास्त्रीय संगीत के रागों में इन्हीं श्रुतियों का प्रयोग किया जाता है।

<u>1.4.2 लय</u> – लय पूरे बृह्मांड में विद्यमान है। *समय की समान गति को लय कहते हैं।* हर साठ सैकेंड का एक मिनट, हर साठ मिनट का एक घंटा, चौबीस घंटों का एक दिन, 30/31 दिनों का एक महीना व बारह महीनों का एक वर्ष, ये सब निश्चित अन्तराल, जीवन शैली को संचालित करते हैं। हृदय का स्पन्दन व नाड़ी का स्पन्दन भी समान अन्तराल से होता है जिससे जीवन चलता है। इस अन्तराल में व्यवधान अथवा अनियमित्ता आने पर जीवन के संचालन में बाधा उत्पन्न होने लगती है। *यही नियमित अन्तराल ही लय कहलाता है।* स्वर का आधार भी लय ही है क्योंकि *नियमित कम्पन्न संख्या की ध्वनि को स्वर कहा गया है।* सृष्टि का संचालन लय पर आधारित है। संगीत में लय के तीन प्रकार – विलम्बित, मध्य एवं द्रुत माने गए हैं।

विलम्बित लय, वह लय है जिसमें अन्तराल का समय लम्बा होता है, यही अन्तराल का समय दुगुना होने पर मध्यलय एवं मध्यलय का अन्तराल दुगुना होने पर द्रुत लय हो जाती है। मध्यलय स्वाभाविक लय है। हम अपनी स्वाभाविक चाल को मध्यलय कह सकते हैं। उससे आहिस्ता अथवा तेज गति में चलना किसी विशेष कारण से ही होता है। यदि मध्यलय के अन्तराल का समय एक सैकेंड माना जाए तो इस प्रकार दो सैकेंड का अन्तराल विलम्बित एवं आधा सैकेंड का अन्तराल द्रुत लय कहलाएगी।

1.5 संगीत की विधाएं

संगीत की चार विधाओं – शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत एवं लोक संगीत की व्याख्या इस खण्ड में की जाएगी।

1.5.1 <u>शास्त्रीय संगीत</u> – ऐसा संगीत जिसका शास्त्र निश्चित है अर्थात शास्त्र पर आधारित वह संगीत जिसमें राग व लय–ताल शास्त्र के नियमों के आधार पर स्वर एवं लय का सुन्दर संयोजन कर राग को गाया अथवा वाद्यों पर प्रस्तुत किया जाता है, शास्त्रीय संगीत कहलाता है।

गायन

वादन

नृत्य

इसमें रागों के नियमों का पालन करना आवश्यक है तथा रंजकता हेतु नियमों को शिथिल करने का अधिकार नहीं होता है। ये नियम स्थिर होते हैं एवं किसी भी प्रदेश या देश में शास्त्रीय संगीत का प्रयोग समान होता है। उदाहरण के लिए जैसे यदि राग यमन का प्रयोग विलम्बित लय की एकताल में किया जा रहा है तो चाहे देश का कोई भी भाग हो, राग यमन के निश्चित नियम, एकताल की बारहमात्रा एवं ताल को प्रदर्शित करने वाले तबले के निश्चित बोल ही प्रयोग में लाए जाऐंगे एवं इसी प्रकार बाहर के देशों में जैसे– अफगानिस्तान, पाकिस्तान, बांगलादेश आदि में भी शास्त्रीय संगीत का प्रयोग, नियमों के आधार पर ही किया जाएगा। पश्चिमी देशों में तो संगीत की शिक्षा भारतीय संगीत शिक्षकों द्वारा ही दी जाती है। भारत में संगीत की दो शैलीयॉ प्रचलित हैं – उत्तर भारतीय संगीत एवं दक्षिण भारतीय संगीत। इन दोनों शैलियों का शास्त्र भिन्न है एवं ये दोनों अपने शास्त्र पर आधारित है। स्वर एक होने के बावजूद भी दोनों शैलियों में रागों के नामकरण पृथक है, राग प्रस्तुतिकरण का ढंग अलग है एवं ताल शास्त्र के नियम भी पृथक ही हैं। उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत की शैलियों की व्याख्या 'संगीत के अंग' भाग के अन्तर्गत की जाएगी।

1.5.2 <u>उपशास्त्रीय संगीत</u> – जैसा की नाम से ही पता चल रहा है कि इस संगीत में पूर्ण शास्त्र का प्रयोग नहीं है। संगीत का आधार तो शास्त्र है परन्तु इसमें राग शास्त्र के नियमों का कठोरता से पालन करने की आवश्यकता नहीं है। इसमें राग के नियमों को भाव, रस एवं माधुर्य हेतु शिथिल किया जा सकता है। उदाहरण के लिए जैसे उपशास्त्रीय संगीत की रचना यदि पीलू अथवा काफी राग पर आधारित कर प्रयोग की जा रही है तो इसमें रजंकता हेतु इन रागों में प्रयोग होने वाले स्वरों के अतिरिक्त भी स्वर प्रयोग किए जा सकते हैं। इस प्रकार का यह मिश्र स्वरूप, मिश्र पीलू अथवा मिश्र काफी कह कर पुकारा जाता है। उपशास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत आने वाली शैली ठुमरी, दादरा, कजरी, चैती एवं होली का परिचय आप *'संगीत के अंग'* के अन्तर्गत प्राप्त करेंगे। उपशास्त्रीय संगीत हेतु मुख्यतः राग पीलू, काफी, देश, खमाज, पहाड़ी, तिलंग, भैरवी आदि रागों का प्रयोग किया जाता है।

ठुमरी

होली

कजरी

1.5.3 सुगम संगीत – यह संगीत पूर्णतया भाव प्रधान है। इसमें हिन्दी के कवियों एवं उर्दू के शायरों द्वारा रचित रचनाओं को स्वर–लय में बांधकर गाया जाता है। गीत, भजन एवं गजल, सुगम संगीत की श्रेणी में आते हैं। संगीत, भक्ति का माध्यम रहा है अतः मुस्लिम धर्म की नात–कव्वाली एवं हिन्दू धर्म की कीर्तन गायन शैली भी सुगम संगीत की श्रेणी में ही आऐंगे।

गजल गीत भजन

1.5.4 लोक संगीत – ग्रामीण परिवेश में, लोक संगीत उन्मुक्त वातावरण में जन्म लेता है। लोक संगीत में मुख्यतया नृत्य एवं गाना–बजाना साथ–साथ होता है। लोक संगीत से प्रदेश विशेष की प्राकृतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का परिचय प्राप्त होता है एवं गीतों का विषय भी इन्हीं पर आधारित होता है। लोक संगीत की धुनों ने शास्त्रीय संगीत एवं उपशास्त्रीय संगीत को प्रभावित किया है। पहाड़ की धुन पर आधारित पहाड़ी राग एवं राजस्थान क्षेत्र का मांड इसके उदाहरण हैं।

कुमाऊँनी

गढ़वाली

राजस्थानी

1.6 संगीत के अंग

संगीत शब्द सम्यक एवं गीत से मिलकर बना है। सम्यक+गीत = संगीत। सम्यक का अर्थ है भलीभांति एवं गीत का अर्थ है गाना अर्थात भलीभांति गाना संगीत है। जैसा की प्रस्तावना में बताया जा चुका है कि संगीत के अन्तर्गत गायन, वादन एवं नृत्य तीनों आते हैं एवं यही संगीत के अंग हैं। इस भाग में आप तीनों के विषय में अलग–अलग परिचय प्राप्त करेंगे।

भारतीय शास्त्रीय संगीत(गायन, वादन व नृत्य) के शीर्ष कलाकार

1.6.1 गायन – गायन को कंठ संगीत भी कहा जाता है, अर्थात कंठ के द्वारा संगीत उत्पन्न करना। गायन, स्वर, लय एवं पद्य के संयोग से बनता है। पद्य अथवा काव्य का गायन में मुख्य स्थान है। गायन की शैली के अनुसार पद्य अथवा काव्य का चयन किया जाता है। शास्त्रीय गायन विद्या के अन्तर्गत ख्याल एवं ध्रुपद गायन शैली आती है। शास्त्रीय गायन की इन दोनों शैलीयों का वर्णन प्रस्तुत है।

1.6.1.1 ख्याल – ख्याल का अर्थ है कल्पना अतः इसमें राग के नियमों के अन्तर्गत विभिन्न स्वर समूहों की लय व ताल के साथ कल्पना कर, राग का स्वरूप स्थापित किया जाता है। ख्याल गायन में विलम्बित, मध्य एवं द्रुत लय की रचनाऐं गाई जाती हैं। इसमें आलाप – 'अकार' अर्थात 'अ', 'आकार' अर्थात 'आ', 'उकार' अर्थात 'उ' एवं 'इकार' अर्थात 'इ' वर्णों के माध्यम से किया जाता है। राग के भाव व रस के आधार पर पद्य का चयन कर रचनाऐं गाई जाती हैं जिसका अलंकरण आलाप, बोल आलाप, बोल तान, सरगम एवं तानों के प्रयोग से किया जाता है। इन सबका अध्ययन आप आगे की इकाईयों में करेंगे। विलम्बित लय की रचना अथवा बन्दिश को बड़ा ख्याल कहा जाता है। बड़े ख्याल हेतु एकताल, तिलवाड़ा, झूमरा आदि तालों का प्रयोग किया जाता है। मध्य व द्रुत लय की रचना अथवा बन्दिश को छोटा ख्याल कहा जाता है। मध्य लय एवं द्रुत लय की रचना – तीनताल, एकताल, आड़ाचारताल आदि तालों में की जाती है। अति द्रुत लय में 'तराना' गाया जाता है। अति द्रत लय में चूंकि शब्दों का उच्चारण शुद्ध नहीं रखा जा सकता है अतः इसमें निरर्थक शब्द जैसे दानी–तानी, दीम, तन, तनन, देरे, ना द्रीतोम आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता है। बड़े एवं छोटे ख्याल के बाद ही तराना गाने की परम्परा है क्योंकि लय शास्त्र के नियमानुसार क्रमशः विलम्बित, मध्य एवं द्रुत लय का प्रयोग किया जाता है। यह कोमल एवं मधुर गायन शैली है। इसमें लय–ताल हेतु अवनद्ध वाद्य तबले का प्रयोग किया जाता है।

अब्दुल करीम खॉ
किराना घराना

उस्ताद अल्लादिया खॉ
जयपुर घराना

उस्ताद अमीर खॉ
इन्दौर घराना

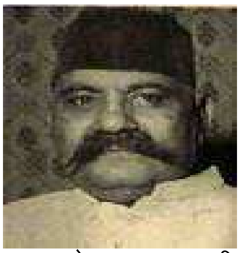
उ0 बड़े गुलाम अली
पटियाला घराना

पं0 भीमसेन जोशी
किराना घराना

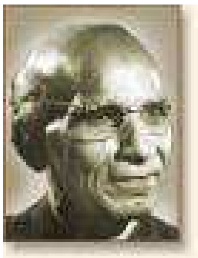
उस्ताद चॉद खॉ
दिल्ली घराना

पं0 डी0वी0 पलुस्कर
ग्वालियर घराना

उस्ताद फैयाज खॉ
आगरा घराना

उ0 मुस्ताक हुसैन खॉ
रामपुर घराना

उ0 वाहिद हुसैन
खुर्जा घराना

<u>1.6.1.2 ध्रुवपद</u> – ध्रुवपद गायन शैली ख्याल से प्राचीन है। ध्रुवपद के बाद ही ख्याल का जन्म हुआ। यह गायन शैली जोरदार एवं गंभीर है। पखावज वाद्य की ध्वनि तबले की अपेक्षा गंभीर होती है इसीलिए ध्रुवपद गायन हेतु पखावज की संगति की जाती है। ध्रुवपद की रचना पखावज पर बजने वाली तालों जैसे चारताल, सूलताल, धमार, तीवरा आदि में की जाती है। इसमें सरगम एवं तानों का प्रयोग नहीं किया जाता है बल्कि इसके स्थान पर दुगुन, तिगुन, चौगुन एवं कठिन लयकारी का प्रयोग कलाकार की सामर्थ के अनुसार किया जाता है। लयकारी का अध्ययन आप आगे करेंगे। इस गायन शैली में ताल के साथ रचना प्रस्तुत करने से पहले नोम–तोम शब्दों के माध्यम से विलम्बित, मध्य एवं द्रुत लय में आलाप प्रस्तुत किया जाता है।

पं0 सियाराम तिवारी

गुन्डेचा ब्रदर्स

उ0 वसीफुद्दीन डागर

<u>1.6.1.3 ठुमरी, दादरा, कजरी, चैती एवं होली</u> – उपशास्त्रीय गायन की विधा की इन शैलियों का प्रमुख उद्देश्य शब्दों के भावों को स्वर एवं लय के विभिन्न प्रयोगों द्वारा प्रकट करना है। ठुमरी विलम्बित लय में एवं दादरा मध्य लय में गाया जाता है। ठुमरी के बाद ही दादरा गाने की परम्परा है। ठुमरी एवं दादरा वियोग एवं श्रृंगार रस लिए हुए होता है। ठुमरी हेतु दीपचन्दी, जत, पंजाबी आदि तालों का प्रयोग किया जाता है एवं दादरा हेतु कहरवा एवं दादरा ताल प्रयोग की जाती है। दादरा एक ताल का नाम भी है।

कजरी एवं चैती, लोक शैली की विधा है जिसको परिष्कृत कर दादरा की भांति गाया जाता है। कजरी वर्षा ऋतु में एवं चैती, पूर्वी अचंल में चैत्र माह में गाई जाती है। होली गायन फाल्गुन माह में होली पर्व के अवसर पर गाया जाता है एवं इसका गायन ठुमरी की भांति किया जाता है। गायन के विद्यार्थी इन सबका विस्तृत अध्ययन आगे चलकर करेंगे।

<u>1.6.2 वादन</u> – भारतीय वाद्यों को प्राचीन ग्रन्थों, भरत के नाट्यशास्त्र एवं शारंगदेव के संगीत रत्नाकर आदि में चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है।

1. तत वाद्य 2. सुषिर वाद्य 3. अवनद्ध वाद्य 4. घन वाद्य

<u>1.6.2.1 तत वाद्य</u> – इस श्रेणी के वाद्यों में तारों के द्वारा स्वर उत्पन्न किए जाते हैं। जैसे वीणा, सितार, सरोद एवं तानपुरा। वीणा एवं सितार में धातु(पीतल) की वस्तु को अंगुली में पहनकर तारों पर आघात कर स्वर उत्पन्न किये जाते हैं, इसको मिजराब कहा जाता है। सरोद वाद्य को, नारियल के ऊपर के कठोर भाग के टुकड़े(जवा) के द्वारा बजाया जाता है। तानुपरा को केवल अंगुली से बजाया जाता है। तत वाद्य के अन्तर्गत ऐसे वाद्य भी आते हैं जिनमें तारों पर स्वर, गज (धनुष की आकार जिसमें डोरी के स्थान पर घोड़े की पूंछ के बाल होते हैं) के आघात अथवा घिस कर निकाले जाते हैं। इनको वित्त वाद्य भी कहते हैं, जैसे सारंगी, वायलिन, इसराज आदि। तत वाद्य की श्रेणी में वे सब वाद्य आते हैं जिनमें तार होते हैं। तत वाद्यों पर विलम्बित एवं मध्य लय की रचना प्रस्तुत की जाती है। तत वाद्यों हेतु मसीत खां द्वारा मिजराब अथवा जवा के बोलों से तीनताल की विलम्बित लय हेतु मसीतखानी गत एवं इसी प्रकार मध्यलय हेतु रजा खां द्वारा रजाखानी गत की रचना की गई। इन गतों की वादन शैली को तंत्र वादन शैली कहा जाता है। तत वाद्य के अन्तिम एवं प्रथम तार पर मिजराब एवं जवा के द्वारा अति द्रुत लय में झाला बजाया जाता है। मसीतखानी एवं रजाखानी गतों से पूर्व इन वाद्यों में ध्रुवपद गायन की भांति बिना ताल के आलाप बजाया जाता है। वित्त वाद्यों पर ख्याल गायन शैली का प्रयोग किया जाता है। यद्यपि

कुछ कलाकरों द्वारा वितत वाद्यों पर तंत्र वादन शैली अथवा तंत्रकारी बाज का भी प्रयोग किया जाता है। वित्त वाद्य, गायन की संगति हेतु उपयोगी माने गए हैं।

स्वर वाद्य के विद्यार्थी इन सबका विस्तृत अध्ययन आगे चलकर करेंगे।

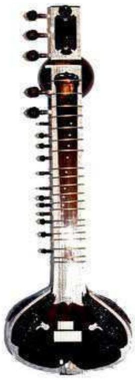

तानपुरा सरोद रुद्रवीणा सितार

<u>1.6.2.2 सुषिर वाद्य</u> – इस श्रेणी में स्वर, हवा अथवा फूंक के द्वारा उत्पन्न किए जाते हैं। जैसे बांसुरी, शहनाई, मसकबीन, क्लारनेट, हारमोनियम आदि। बांसुरी एवं शहनाई शास्त्रीय संगीत में प्रयोग किये जाते हैं। मसकबीन व क्लारनेट विदेशी वाद्य हैं। मसकबीन, उत्तरांचल क्षेत्र के लोक संगीत वाद्य की मान्यता प्राप्त कर चुका है।

शहनाई बांसुरी हारमोनियम

<u>1.6.2.3 अवनद्ध वाद्य</u> – इस श्रेणी में चमड़े से मढ़े हुए वाद्य आते हैं। मढ़े चमड़े पर हाथ या लकड़ी के आघात से विभिन्न ध्वनियां उत्पन्न की जाती है, जिनको बोल कहा जाता है। जैसे तबला, पखावज, ढ़ोलक, खंजरी, ढ़ोल आदि। अवनद्ध वाद्य संगीत में लय एवं ताल दिखाने के लिए प्रयोग किये जाते हैं। तबले का प्रयोग संगीत की हर विधा में किया जाता है जबकि पखावज का प्रयोग शास्त्रीय संगीत में ही किया जाता है। ढ़ोलक, खंजरी, ढ़ोल आदि लोक शैलियों में प्रयोग किए जाते हैं। अवनद्ध वाद्य के विद्यार्थी इन वाद्यों का सम्पूर्ण ज्ञान आगे चलकर प्राप्त करेंगे।

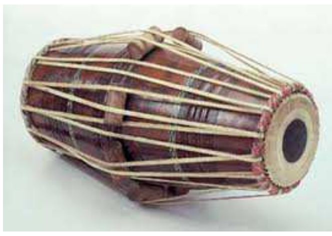

तबला पखावज

1.6.2.4 घन वाद्य – घन वाद्यों में ध्वनि, लकड़ी या किसी वस्तु के आद्यात से उत्पन्न की जाती है। जैसे मंजीरा, करताल, जलतरंग, घंटातरंग, झांझ आदि।

जलतरंग

मंजीरा

1.6.3 नृत्य – पद अथवा पैर, शारीरिक अंग एवं भाव भंगिमाओं के द्वारा भाव प्रकट करने को नृत्य कहा जाता है। नृत्य के अन्तर्गत, शास्त्रीय नृत्य एवं भाव नृत्य दोनों ही स्वरूप पाए जाते हैं। शास्त्रीय नृत्य में, नृत्य की रचनाओं को पद की थाप, अंग संचालन एवं भाव भंगिमाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। शास्त्रीय नृत्य के अन्तर्गत कत्थक, कथकली, उड़ीसी, भरतनाट्यम, मोहिनीअट्टम, कुचिपुड़ी आदि नृत्य आते हैं। भाव नृत्य में पद का भाव नृत्य के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। इसके अन्तर्गत ठुमरी पर भाव, भजन एवं गजल पर भाव, नृत्य के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। फिल्मों में होने वाला नृत्य भी भाव नृत्य के अन्तर्गत ही आएगा। किसी कथानक का चित्रण, नृत्य के माध्यम से करना भी भावनृत्य ही है।

कत्थक

कथकली

उडीसी

भरतनाट्यम

1.7 संगीत की उपयोगिता

संगीत को मोक्ष प्राप्ति का साधन माना गया है। संगीत से मानसिक शान्ति मिलती है एवं तनाव दूर होता है। अतः संगीत को जीवन शैली का अंग बनाने से जीवन आनन्दमय हो जाता है। यही कारण है कि पश्चिम के लोग भारतीय संगीत को अपनी जीवन शैली का अंग बना रहे हैं। विदेशों में भारतीय संगीत का भरपूर प्रचार एवं प्रसार हो रहा है। भक्ति के लिए भी संगीत का प्रयोग अति उत्तम बताया गया है। भक्ति आन्दोलन में संगीत ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया था। इसके अतिरिक्त संगीत जीविका चलाने का साधन भी है। संगीत के गहन अध्ययन एवं शिक्षण प्राप्त करने के पश्चात आप संगीत के व्यवसायिक कलाकार एवं शिक्षक बन सकते हैं। संगीत, विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में एक विषय के रूप में पढ़ाया जा रहा है जहां आपको शिक्षक का पद प्राप्त हो सकता है। व्यवसायिक कलाकारों हेतु तो अनन्त सम्भावनाएं हैं। संगीत को चिकित्सा पद्धति का अंग भी बनाया जा रहा है। विदेशों एवं भारत में भी मानसिक बिमारियों का उपचार संगीत के माध्यम से किया जा रहा है। अतः संगीत विषय के अध्ययन से आप अपना जीवन सुन्दर एवं तनाव रहित बनाऐंगे एवं इसको व्यवसाय के रूप में चुनने का विकल्प भी आपके पास होगा।

अभ्यास प्रश्न

क) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1) संगीत की उत्पत्ति पर प्रकाश डालिए।
2) संगीत के अंगों के विषय में लिखिए।
3) वाद्यों के वर्गीकरण को समझाइए।

4) संगीत की उपयोगिता पर टिप्पणी लिखिए।
5) संगीत की विधाओं को संक्षेप में बताइए।
6) शास्त्रीय व उपशास्त्रीय संगीत की एक–एक समानता व एक–एक असमानता लिखिए।
7) स्वर व लय के विषय में लिखिए।

ख) सत्य/असत्य बताइए :

1) बांसुरी तत वाद्य की श्रेणी में आती है।
2) ठुमरी गायन शैली शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत आती है।
3) संगीत रत्नाकर ग्रन्थ के लेखक शारंगदेव हैं।
4) ध्रुवपद गायन शैली शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत आती है।
5) अवनद्ध वाद्य का प्रयोग लय व ताल दिखाने के लिए किया जाता है।

ग) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

1) भारतीय मान्यता के अनुसार संगीत की उत्पत्ति .... से मानी गई है।
2) .... और .... संगीत के मूल तत्व हैं।
3) एक सप्तक में .... स्वर होते हैं।
4) लय के .... प्रकार माने गए हैं।
5) भारतीय वाद्यों को .... श्रेणी में बांटा गया है।
6) कत्थक, कथकली व भरतनाट्यम नृत्य .... की श्रेणी में आते हैं।
7) भारत में संगीत की .... पद्धति प्रचलित हैं।
8) राग पहाड़ी व राग मांड़ .... में अधिक प्रयोग होता है।
9) भजन, गजल व गीत .... संगीत के अन्तर्गत आते हैं।
10) संगीत के अन्तर्गत ...., ... व ....रूप आते हैं।

1.8 सारांश

इस इकाई के बाद आप संगीत से परिचित हो चुके होंगे। संगीत की उत्पत्ति व इसके मूल तत्वों के विषय में भी आप जान चुके होंगे। संगीत की विधाओं, इसके अंगों का ज्ञान एवं संगीत की उपयोगिता को भी आप भलीभांति समझ चुके होंगे। संगीत से जुड़ी उक्त सभी जानकारी प्राप्त करने के पश्चात आप अपने को भविष्य में संगीत विषय का गहन अध्ययन करने में समर्थ्य पाऐंगे एवं संगीत की विधाओं में भी सरलता से चयन(अपनी रूचि के अनुसार) करने में समर्थ्य हो चुके होंगे।

1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

ख) सत्य/असत्य बताइए :

1) असत्य 2) असत्य 3) सत्य 4) सत्य 5) सत्य

ग) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

1) ब्रह्मा 2) स्वर व लय 3) सात 4) तीन(विलम्बित, मध्य व द्रुत)
5) चार(तत, सुषिर, अवनद्ध व घन) 6) शास्त्रीय नृत्य 7) दो(उत्तर व दक्षिण भारतीय)
8) लोक संगीत 9) सुगम संगीत 10) गायन, वादन व नृत्य

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1) वसन्त, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2) सेन, डॉ0 अरूण कुमार, *भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन,* मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
3) साभार गूगल।

1.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1) संगीत की उत्पत्ति, तत्व, विधाओं व अंगों का सविस्तार वर्णन कीजिए।

इकाई 2 – भारतीय संगीत का संक्षिप्त इतिहास

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 भारतीय संगीत की उत्पत्ति
2.4 भारतीय संगीत का इतिहास
 2.4.1 प्राचीन काल
  2.4.1.1 वैदिक काल
  2.4.1.2 संदिग्ध काल
  2.4.1.3 भरत काल
 2.4.2 मध्य काल
  2.4.2.1 पूर्व मध्य काल
  2.4.2.2 उत्तर मध्य काल
 2.4.3 आधुनिक काल
  2.4.3.1 स्वतंत्रता से पूर्व
  2.4.3.2 स्वतंत्रता के बाद
2.5 सारांश
2.6 शब्दावली
2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची
2.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (बी0ए0एम0एम0(एन)–120) प्रथम सेमेस्टर के प्रथम खण्ड की द्वितीय इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप बता सकते हैं कि संगीत क्या है तथा संगीत की मानव जीवन में क्या उपयोगिता है?

प्रस्तुत इकाई में भारतीय संगीत के इतिहास के बारे में बताया जाएगा। संगीत के सम्पूर्ण इतिहास के माध्यम से आपको इसके स्वरुप से अवगत कराया जाएगा।

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप भारतीय संगीत के समग्र इतिहास को भली–भांति जान पाऐंगे तथा प्राचीन से लेकर आधुनिक काल तक के संगीत के प्रचारकों के बारे में भी जान पाऐंगे।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप बता सकेंगे कि :–

- भारतीय संगीत कब से अस्तित्व में आया अथवा भारतीय संगीत की उत्पत्ति कब हुई?
- किस काल में संगीत के कौन–कौन विद्वान हुए?
- किस काल में किस शासक द्वारा किस संगीतज्ञ को आश्रय दिया गया अथवा किसके शासन काल में संगीत की ज्यादा उन्नति हुई?
- आधुनिक काल में भारतीय संगीत, किन महान विभूतियों द्वारा प्रचारित–प्रसारित किया गया?

2.3 भारतीय संगीत की उत्पत्ति

मनुष्य के जन्म के साथ ही संगीत की उत्पत्ति का इतिहास भी जुड़ा हुआ है। संगीत की उत्पत्ति कब, कैसे और किसके द्वारा हुई, इस बारे में विद्वानों के अनेक मत हैं। वास्तव में संगीत का इतिहास स्वयं मानव का इतिहास है। जैसे–जैसे मनुष्य का विकास होता गया, संगीत की भी उन्नति होती गई।

भारतीय संगीत की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विद्वानों ने मुख्य तीन आधार माने हैं :–

<u>1) धार्मिक आधार</u> – धार्मिक दृष्टिकोंण से शिव, ब्रहमा, सरस्वती, गन्धर्व और किन्नर ये देवता संगीत के प्रेरक माने जाते हैं। शिव के हाथों में डमरू, सरस्वती के हाथों में वीणा, स्वर्ग में किन्नर (वादन करने वाले), गन्धर्व (गायन करने वाले) और अप्सराएं (नृत्य करने वाली स्त्रियॉ) आदि से स्पष्ट है कि भारतीय संगीत अत्यन्त प्राचीन है।

<u>2) प्राकृतिक आधार</u> – इस आधार के अनुसार संगीत की उत्पत्ति प्रकृति से हुई। मनुष्य ने अपने जीवन के आस–पास संगीतमय वातावरण देखा। जैसे नदियों की लहरों से, सागर की तरंगों से, पक्षियों के कलरव से, हवाओं के झोंकों आदि की ध्वनियों को सुनकर ही मनुष्य ने संगीत को जन्म दिया होगा। मनुष्य ने अपनी भावनाओं को ऊँची–नीची ध्वनियों की सहायता से व्यक्त किया होगा।

<u>2) मनोवैज्ञानिक आधार</u> – इस आधार के अनुसार जैसे–जैसे मनुष्य क्रमिक विकास की सीढ़ियॉ चढ़ता गया वैसे–वैसे ही विभिन्न कलाऐं उसके विकसित जीवन से जुड़ती गई। अतः संगीत आदि सभी कलाऐं क्रमिक विकास से जुडी है। बच्चे के पैदा होते ही उसके कंठ से ध्वनि निकलती है, गायन और वादन इसी ध्वनि का सहज विकास है।

2.4 भारतीय संगीत का इतिहास

भारतीय संगीत के इतिहास को हम तीन भागों में बांट सकते हैं :

1. प्राचीन काल (आदि काल से 800 ई0 तक)
2. मध्य काल (800 से 1800 ई0 तक)
3. आधुनिक काल (1800 ई0 से वर्तमान तक)

<u>2.4.1 प्राचीन काल (आदि काल से 800 ई0 तक)</u> :

प्राचीन काल

- वैदिक काल
  - ऋगवेद
  - यजुर्वेद
  - अथर्ववेद
  - सामवेद
- संदिग्ध काल
  - उपनिशद
  - रामायण
  - महाभारत
- भरत काल
  - नाट्यशास्त्र (भरत)
  - वृहद्देशी (मंतग)
  - नारदी शिक्षा (नारद)

उपरोक्त सारणी के अध्ययन से आप समझ पाऐंगे कि प्राचीन काल के इतिहास को हमने पुनः तीन काल में विभाजित किया है।

1) वैदिक काल 2) संदिग्ध काल 3) भरत काल

<u>2.4.1.1 वैदिक काल</u> – इस काल का प्रारम्भ आदि काल में ईसा से 1000 वर्ष पूर्व तक माना गया है। इसी काल में हिन्दु धर्म के चारों वेदों की रचना हुई, इसलिए इसे वैदिक काल कहा जाता है। चारों वेदों के नाम है – ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद व सामवेद। इनमें **'ऋग्वेद'** विश्व का सबसे प्राचीन ग्रन्थ हैं, जिसके संग्रहित मंत्रों को 'ऋक' या 'ऋचा' कहते हैं। इसके सभी मंत्र छन्दोबद्ध है, जिनमें अनेक देवी–देवताओं की स्तुतियां उपलब्ध हैं। **यजुर्वेद** में यज्ञों का विधान है। **अथर्ववेद** में सुखमूलक एवं कल्याणप्रद मंत्रों का संग्रह तथा *तांत्रिक* विधान दिया है। चारों वेदों में सामवेद प्रारम्भ से अन्त तक संगीतमय है। सामगान में केवल तीन स्वर प्रयोग किये जाते हैं, जिनके नाम है – उदात्त, अनुदात्त व स्वरित। धीरे–धीरे स्वरों की संख्या 3 से 4, 4 से 5 तथा 5 से 7 हुई।

<u>2.4.1.2 संदिग्ध काल</u> – इस काल का समय 1000 ईसा वर्ष पूर्व से 1 ईसवी तक है। इस काल में संगीत का कोई ग्रन्थ नहीं लिखा गया, केवल कुछ उपनिषद, महाभारत, रामायण आदि ग्रन्थ हैं, जिनमें संगीत सम्बन्धी थोड़ी बहुत जानकारी मिलती है। छांदोग्य और वृहदारण्यक उपनिषदों में संगीत का उल्लेख मिलता है तथा संगीत वाद्यों के नाम भी मिलते हैं। महाभारत में सात स्वरों और गन्धार ग्राम का उल्लेख मिलता है। रामायण में विभिन्न प्रकार के वाद्यों का उल्लेख मिलता है। रावण स्वयं संगीत का एक बड़ा विद्वान था। उसने *रावणस्त्रन्* नामक वाद्य का अविष्कार कियज्ञं

<u>2.4.1.3 भरत काल</u> – इस काल का समय 1 ई0 से 800 ई0 तक है। इस काल की पहली विशेषता यह है कि जिस प्रकार आजकल 'राग गायन' प्रचलित है उस समय 'जाति गायन' प्रचलित था। इस काल की दूसरी विशेषता यह है कि इसी काल में सर्वप्रथम 3 ग्राम, 22 श्रुतियां, 7 स्वर, 18 जातियां और 21 मूर्च्छनाओं का वर्णन मिलता है।

<u>इस काल के मुख्य ग्रन्थ :</u>

<u>1.नाट्यशास्त्र (लेखक–भरत)</u> – यह भारतीय संगीत का महत्वपूर्ण ग्रन्थ है, जिसका रचना काल पॉचवीं शताब्दी माना जाता है। यह ग्रन्थ नाट्य से सम्बन्धित है, किन्तु 28–33वें अध्याय तक इसमें संगीत के विषय में प्रकाश डाला गया है।

<u>2.बृहददेशी (लेखक–मतंग)</u> – इस ग्रन्थ के रचनाकाल के विषय में मतभेद हैं। कुछ विद्वान इसे तीसरी, कुछ चौथी, कुछ पॉचवी, कुछ छठी तथा कुछ आठवीं शताब्दी का ग्रन्थ मानते हैं। संगीत के इतिहास में सर्वप्रथम इसी ग्रन्थ में 'राग' शब्द प्रयोग किया गया है। राग शब्द का वर्तमान परिप्रेक्ष्य में काफी महत्व है। इसमें 6 अध्याय माने गए हैं।

<u>3. नारदीय शिक्षा (लेखक–नारद)</u> – यह ग्रन्थ सातवीं शताब्दी के लगभग लिखा गया। इसमें प्रथम बार पुरूष राग और स्त्री राग के आधार पर आगे चलकर राग–रागिनी पद्धति का विकास हुआ।

2.4.2 मध्य काल(800 से 1800 ई0 तक)

मध्य काल की अवधि 8 वीं शताब्दी से 18 वीं शताब्दी तक मानी जाती है। इस काल को आप निम्न सारणी के माध्यम से जान पाऐंगे कि मध्य काल में भारतीय संगीत की उन्नति के लिए कौन–कौन से ग्रन्थकार हुए तथा उन्होंने कौन से ग्रन्थ लिखे।

मध्य काल

पूर्व मध्य काल(8वीं–13 वीं) काल

(13 वीं–18 वीं)उत्तरमध्य

संगीत रत्नाकर (शारंगदेव)
संगीत मकरन्द (नारद)
गीत गोविन्द (जयदेव)

राग तरंगिणी *(लोचन)*
मानकौतुहल *(मानसिंह तोमर)*
रागमाला, राग मंजरी, सद्रागचन्द्रोदय *(पुण्डरीक विट्ठल)*
राग विबोध, *(सोमनाथ)* (1610)
संगीतपारिजात *(अहोबल)* (1650)
ह्रदयकौतुक, ह्रदय प्रकाश *(ह्रदयनारायणदेव)*

चतुर्दंडिप्रकाशिका *(वेंकटमुखी)*
राग तत्व विबोध *(श्रीनिवास)*

उपरोक्त सारणी के माध्यम से आप जान चुके हैं कि मध्य काल को फिर से दो विभागों में विभाजित किया गया है – पूर्व मध्य काल व उत्तर मध्य काल।

2.4.2.1 पूर्व मध्य काल – इस काल की विशेषता है कि जिस प्रकार आज राग गायन प्रचलित है, उसी प्रकार उस समय में प्रबन्ध गायन प्रचलित था। इसलिए इसे प्रबन्ध काल भी कहते हैं। इस काल में लिखे गए संगीत सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण ग्रन्थ निम्न हैं :–

1. **संगीत मकरन्द** – इस ग्रन्थ के रचयिता नारद जी थे। रागों को स्त्री, पुरूष और नपुंसक वर्गों में विभाजित करने का वर्णन सर्वप्रथम इसी पुस्तक में प्राप्त होता है। अतः इसे राग–रागिनी पद्धति का आधार ग्रन्थ कहा जाता है।
2. **गीत गोविन्द** – इसकी रचना 12 वीं शताब्दी में पं0 जयदेव द्वारा हुई थी। पं0 जयदेव केवल कवि ही नहीं अपितु गायक भी थे। इस पुस्तक में प्रबन्धों और गीतों का संग्रह है, किन्तु स्वरलिपि न होने से उन्हें उसी प्रकार से नहीं गाया जा सकता है।
3. **संगीत रत्नाकर** – इसकी रचना 13 वीं शताब्दी में शारंगदेव द्वारा हुई। यह ग्रन्थ केवल उत्तर भारतीय संगीत में ही नहीं बल्कि दक्षिणी भारतीय संगीत में भी बहुत महत्वपूर्ण समझा जाता है।

<u>2.4.2.2 उत्तर मध्य काल</u> – इस काल में फारसी और उत्तर भारतीय संगीत का मिश्रित रूप भली–भांती विकसित हुआ। अतः यह काल *संगीत का स्वर्ण युग* कहा गया है। अधिकांश मुसलमान शासकों को संगीत से विशेष प्रेम था। अतः उन्होंने अपने दरबार में संगीतज्ञों को आश्रय दिया और संगीत को प्रोत्साहन दिया।

<u>इस काल के शासक, उनका राज्यकाल और दरबारी संगीतज्ञ</u>

शासक	राज्यकाल	दरबारी संगीतज्ञ	अविष्कारक
अलाउद्दीन खिलजी	1269–1316 (दिल्ली)	अमीर खुसरो	सितार, कव्वाली, तराना, तबला, रागों में साजगिरी सरमपरदा आदि
सुल्तान हुसैन शर्की	1458–1499(जौनपुर)	स्वयं	बड़ा ख्याल व रागों में सिन्धुभैरवी, जौनपुरी, जौनपुरी तोड़ी, आदि
राजा मानसिंह तोमर	1486–1517(ग्वालियर)	स्वयं व नायक बख्श (ध्रुवपदिए)	
अकबर	1556–1605	तानसेन, नायक बैजु, नौबरत खां, तानरंग खां, गोपाल नायक	दरबारी कान्हड़ा, मियॉ की सारंग, मियॉ मल्हार, मियॉ की तोड़ी, रामकली, मल्हार आदि(आविष्कारक तानसेन)
जहॉगीर	1605–1627	विलास खॉ, छतर खॉ, मक्खू आदि	
शाहजहॉ	1627–1658	दिगरखॉ लाल खॉ, विलास खॉ	
मुहम्मद शाह रंगीले	1719–1748	सदारंग–अदारंग, शौरी मियॉ	ख्याल(सदारंग–अदारंग), टप्पा(शौरी मियां)

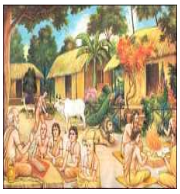
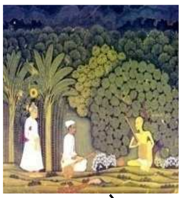

गुरूकुल तानसेन अमीर खुसरो मुहम्मद शाह रंगीले

इस काल में विभिन्न शासकों के शासन काल में अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ भी लिखे गए :

1.<u>राग तरंगिणी</u> – 15 वीं शताब्दी के आरम्भ में पं0 लोचन ने 'राग तरंगिणी' नामक ग्रन्थ लिखा। उन्होंने राग–रागिनी तथा राग वर्गीकरण के स्थान पर थाट राग पद्धति को स्थान दिया तथा कुल 12 थाट माने। 12 थाटों में ही अपने समय के सब रागों की उत्पत्ति की।

2.<u>मान कौतुहल</u> – यह ग्रन्थ ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर के द्वारा लिखा गया। राजा मानसिंह ने तत्कालीन प्रसिद्ध संगीतज्ञों का एक सम्मेलन कराया। उस सम्मेलन में संगीत शास्त्र पर विचार किया गया, जिनका संग्रह राजा मानसिंह ने मान–कौतुहल ग्रन्थ के रूप में किया।

3.<u>राग माला, राग मंजरी, सद्रागचन्द्रोदय</u> – इन ग्रन्थों को पुण्डरीक विट्ठल द्वारा लिखा गया है। सद्रागचन्द्रोदय में इन्होंने दक्षिण संगीत पर लिखा तथा राग माला व राग मंजरी में उत्तरी पद्धति का वर्णन किया है।

4.<u>राग विबोध</u> – 1610 ई0 में दक्षिण के विद्वान पं0 सोमनाथ ने 'रागविबोध' नामक ग्रन्थ की रचना की। इसमें उत्तरी और दक्षिणी संगीत को एक में समन्वित करने का प्रयत्न किया गया है।
5.<u>संगीत पारिजात</u> – 1650 ई0 में पं0 अहोबल द्वारा यह ग्रन्थ लिखा गया। इस ग्रन्थ में प्रथम बार वीणा के तार पर बारह स्वरों की स्थापना का वर्णन है। उन्होंने अपना शुद्ध सप्तक काफी को माना था।

लगभग इसी समय पं0 हृदयनारायण देव द्वारा हृदयकौतुक और हृदयप्रकाश ग्रन्थ लिखे गए।

6.<u>चतुर्दण्डिप्रकाशिका</u> – यह ग्रन्थ 1640–1650 ई0 के लगभग, दक्षिण के विद्वान पं0 वेंकटमुखी द्वारा लिखा गया था। उन्होंने यह सिद्ध किया कि उस समय के स्वर सप्तक से, अधिक से अधिक 72 थाटों की रचना हो सकती है तथा एक थाट से कुल 484 राग उत्पन्न हो सकते हैं। यद्यपि ग्रन्थकार ने एक सप्तक में 12 स्वर माने हैं किन्तु एक स्वर के कई नाम भी स्वीकार किए हैं। इसी समय में भावभट्ट ने तीन ग्रन्थ लिखे – *अनूप संगीत रत्नाकर, अनूप संगीत विलास* तथा *अनूपांकुश*।
7.<u>राग तत्व विबोध</u> – 18 वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में श्रीनिवास ने *'राग तत्व विबोध'* नामक ग्रन्थ की रचना की। इस पुस्तक में उन्होंने पं0 अहोबल की भॉति वीणा के तार की लम्बाई पर भिन्न–भिन्न नापों से 12 स्वरों की स्थापना की। उन्होंने अहोबल के समान ही काफी थाट को अपना शुद्ध थाट रखा।

<u>2.4.3. आधुनिक काल (1800 ई0 से वर्तमान तक)</u>

आधुनिक काल

स्वतंत्रता से पूर्व | स्वतंत्रता के बाद

<u>स्वतंत्रता से पूर्व</u> – 18 वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारत में अंग्रेजों का शासन काल था। अंग्रेजी सभ्यता के परिणामस्वरूप संगीत का विकसित रूप कुंठित होता चला गया। संगीतज्ञों को अपने प्रति अंग्रेजों के उपेक्षित एवं उदासीन व्यवहार के कारण अपनी आजीविकोपार्जन हेतु संगीत कला को व्यवसायिक रूप प्रदान करना पड़ा। जिसका परिणाम यह हुआ कि वैदिक काल की उत्कृष्ठ संगीत कला समाज के निम्न वर्ग में पहुँच गयी। जहॉ उसका एकमात्र उद्देश्य क्षणिक सुख रह गया। समाज ऐसे व्यक्तियों से घृणा करता था जिसका परिणाम यह हुआ कि वह संगीत से भी घृणा करने लगा। संगीत आमोद–प्रमोद का साधन बन गया, यहॉ तक कि सभ्य समाज में संगीत का नाम लेना भी पाप समझा जाने लगा। भारतीय संगीत से प्रभावित अंग्रेजी विद्वान सर विलियम जोन्स व कैप्टन डे ने संगीत को पुनः उबारने का प्रयास किया तथा कुछ पुस्तकें लिखी जिसका समाज में अच्छा असर हुआ और संगीत के प्रति अनादर का भाव भी कम हुआ। इसी समय बंगाल के **'सर सौरेन्द्रमोहन टैगोर** ने 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में 'यूनिवर्सल हिस्ट्री ऑफ म्यूजिक' लिखी। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में एक बार फिर वाजिद अली शाह के दरबार में संगीत का सम्मान हुआ। लखनऊ के गुलाम रज़ा साहब ने *रजाखानी* तथा मसीत खां में *मसीतखानी* गत का आविष्कार करके सितार पर उसके वादन का प्रचार किया।

संगीत के इस काल में दो महापुरूष (पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे व पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर) इस क्षेत्र में आए, जिन्होंने संगीत का उद्धार किया। इन दोनों ही महानुभावों ने देश में जगह–जगह घूम कर संगीत का प्रचार–प्रसार किया एवं अनेक संगीत विद्यालय की स्थापना की जिनमें से प्रमुख हैं :–

1. म्यूजिक कालेज, कलकत्ता।
2. स्कूल ऑफ इन्डियन म्यूजिक, बम्बई।
3. गान्धर्व महाविद्यालय, पूना।
4. गान्धर्व महाविद्यालय मण्डल।
5. भातखण्डे संगीत विश्वविद्यालय (मैरिस कालेज), लखनऊ।
6. प्रयाग संगीत समिति, इलाहाबाद।

आप दोनों ने संगीत से सम्बन्धित कई पुस्तकें भी लिखी।

<u>पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर</u> :
1. संगीत बाल प्रकाश, भाग 1–3
2. संगीत बाल बोध, भाग 1–5
3. भारतीय संगीत लेखन पद्धति
4. बालोदय संगीत
5. संगीत तत्वदर्शक
6. राग प्रवेश, भाग 1–19 आदि

<u>पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे</u> :
1. हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति–कमिक पुस्तक मालिका, 6 भागो में
2. स्वर मालिका (गुजराती)
3. अभिनव राग मंजरी (संस्कृत)
4. श्रीमल्लक्ष्य संगीत (संस्कृत)
5. हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति (चार भागों में)–मराठी में (हिन्दी में भातखण्डे संगीत शास्त्र)

<u>स्वतंत्रता के बाद</u> – स्वाधीन भारत के उन्मुक्त पर्यावरण में संगीत का प्रसार तीव्र गति से होने लगा। भारत सरकार ने संगीत कला के विकास में महान योगदान दिया। *1952* से संगीत कला को प्रोत्साहन देने हेतु कुशल संगीतज्ञों को *राष्ट्रपति पदक* प्रदान करना आरम्भ किया। *1953* में *''संगीत नाटक अकादमी''* तथा *1954* में *''ललित कला अकादमी''* की स्थापना की गई। आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्र स्थापित किए गए। आकाशवाणी के स्तर को बढ़ाने के लिए उसमें भाग लेने वाले कलाकारों की ध्वनि–परीक्षा हुई। ख्याति प्राप्त वृद्ध संगीतज्ञों को मान पत्र भेंट किए जाने लगे। *''संगीत''* तथा *''संगीत कला विहार''* जैसी संगीत पत्रिकाओं का प्रकाशन किया गया। श्रेष्ठ संगीतज्ञों को विदेश में अपनी कला को प्रदर्शित करने हेतु सुविधाएं प्रदान की गई। स्कूल तथा महाविद्यालयों में संगीत को एक विषय के रूप में पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया गया। आकाशवाणी तथा दूरदर्शन के विभिन्न केन्द्रों से शास्त्रीय संगीत तथा सुगम संगीत (भजन, गजल, गीत आदि) के कार्यक्रम प्रसारित किए जाने लगे। इन प्रयासों के कारण आज संगीत जन साधारण के अधिक निकट है।

आधुनिक काल में हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत ध्रुवपद गायकी का प्रचार कम हो गया है तथा ख्याल शैली अधिक प्रचलित हो गयी है। आज ठुमरी गायकी भी संगीत प्रेमियों के मध्य काफी लोकप्रिय है। गायन, वादन तथा नृत्य की संगति हेतु तबला एक लोकप्रिय, सक्षम तथा बहुप्रचलित ताल वाद्य बन चुका है।

मुम्बई की *'सुर सिंगार संसद'* नामक संस्था प्रत्येक वर्ष युवा कलाकारों के लिए *'कल का कलाकार'* नामक संगीत सम्मेलन का आयोजन कर उन्हें *'सुरमणि', 'तालमणि'* आदि अलंकारों से विभूषित कर प्रोत्साहित करती है। इसके अतिरिक्त *'साहित्य कला परिषद'* द्वारा आयोजित युवा महोत्सव में नवोदित कलाकारों को अपनी प्रतिभा प्रदर्शित करने हेतु अवसर प्रदान किए जाते हैं।

आधुनिक काल में संगीत की स्थिति के अध्ययन से यह साफ पता चलता है कि आज गजल, भजन, लोक संगीत तथा फिल्मी संगीत की ही तरह शास्त्रीय संगीत में भी जन सामान्य की रूचि है। श्रोताओं की मानसिक चंचलता, समयाभाव व उनकी रूचि को समझते हुए शास्त्रीय संगीत के

कलाकारों ने भी परम्परागत शैली से थोड़ा हटकर अपने संगीत में कुछ परिवर्तन किए हैं। क्योंकि संगीत समारोहों व संगीत महफिलों में सभी प्रकार के श्रोता सम्मिलित होते हैं और संगीत का मुख्य लक्ष्य श्रोताओं के हृदय में आनन्द का सृजन करना है। वास्तव में प्राचीनता व नवीनता के सम्मिश्रण से ही संगीत को सहज, सुन्दर, जनरूचि के अनुरूप एवं लोकप्रिय बनाया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न

(अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति :

1. नाट्यशास्त्र के रचनाकर —————— हैं।
2. ———————— वेद प्रारम्भ से अन्त तक संगीतमय है।
3. अमीर खुसरो के आश्रयदाता ——————————— थे।
4. तानसेन—————————————— के दरबार में संगीतज्ञ थे।
5. संगीत रत्नाकर—————————————— द्वारा लिखा गया है।
6. प्राचीन काल में ———————————— गायन प्रचलित था।
7. गीत गोविन्द ——————————— द्वारा लिखा गया।
8. सर्वप्रथम वीणा के तार पर स्वरों की स्थापना ————————— ने की।

(ब) वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1) टप्पा के आविष्कार का श्रेय किसको जाता है ?
क) गुलाम रजा   ख) गुलाम रसूल   ग) मियॉ शोरी   घ) मियॉ जानी
2) भरत ने नाट्यशास्त्र की रचना किस शताब्दी में की ?
क) दूसरी शताब्दी   ख) तीसरी शताब्दी   ग) चौथी शताब्दी   घ) पॉचवी शताब्दी
3) राग दरबारी कान्हड़ा बनाने वाले संगीतज्ञ कौन थे ?
क) स्वामी हरिदास   ख) तानसेन   ग) गोपाल नायक   घ) अमीर खुसरो

(स) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1) भारतीय संगीत के प्राचीन काल का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
2) मध्य काल में संगीत के कौन–कौन से ग्रन्थ लिखे गए ? संक्षेप में बताइए।

2.5 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके होंगे कि भारतीय संगीत का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है। आप यह भी जान चुके होंगे कि भिन्न–भिन्न कालों में किस तरह भारतीय संगीत का विकास हुआ तथा कौन–कौन से ग्रन्थ लिखे गए? प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक भारतीय संगीत अनेक परिस्थितियों से गुजरा। जैसे **मध्य काल** को *संगीत का स्वर्ण युग* इसलिए कहा गया क्योंकि इस काल में भारतीय संगीत का बहुत प्रचार–प्रसार हुआ, अनेक नए वाद्यों, रागों तथा तालों के आविष्कार तथा अनेक ग्रन्थ भी लिखे गए। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप यह भी जान चुके होंगे कि वर्तमान में सरकार, निजी संस्थाओं, संगीतज्ञों, आकाशवाणी, दूरदर्शन, संगीत नाटक अकादमी, ललित कला अकादमी आदि अनेक माध्यमों से भारतीय संगीत समाज में लोकप्रिय हो रहा है और उच्चतम शिखरों को छू रहा है।

2.6 शब्दावली

1. **प्रबन्ध गायन** – स्वर, पद और लय युक्त गायन।
2. **जाति गायन** – प्राचीन काल में राग के स्थान पर जातियां गाई जाती थी। ये जातियां वास्तव में मूल राग थी। 18 प्रकार की जातियां, दो ग्रामों (षड़ज ग्राम व मध्यम ग्राम) की चौदह मूर्च्छनाएं अनेक स्वरालियों को जन्म देती थी। उन स्वरालियों में विभिन्न गीतों की रचना की और गाई जाती थी।
3. **आजीविकोपार्जन** – जीविका चलाने हेतु।

4. व्यवसायिक – रोजगार सम्बन्धी।

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

(अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति :

1) भरत	2) सामवेद	3) अल्लाउद्दीन खिलजी	4) अकबर
5) शारंगदेव	6) जाति गायन	7) जयदेव	8) अहोबल

(ब) वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. (ग) मियां शोरी 2. (घ) पांचवी शताब्दी 3. (ख) तानसेन

2.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रीवास्तव, श्री हरीश चन्द्र, *राग परिचय सभी भाग,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. वसन्त, *संगीत विशारद,* संगीत कार्यालय, हाथरस।
3. परांजपे, श्रीधर, *संगीत बोध*।
4. गोवर्धन, श्रीमती शान्ति, *संगीत शास्त्र दर्पण*।
5. साभार गूगल।

2.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. 'संगीत' मासिक पत्रिका, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. चौधरी, डा0 सुभाष रानी, संगीत के प्रमुख शास्त्रीय सिद्धान्त, कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
3. बंसल, डॉ0 परमानन्द, संगीत सागरिका, प्रासंगिक पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भारतीय संगीत के इतिहास का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
2. आधुनिक काल में संगीत की प्रगति पर प्रकाश डालिए।

इकाई 3 – परिभाषा (श्रुति, स्वर, सप्तक, वर्ण, अलंकार, राग, आलाप, लय, लयकारी, मात्रा, ताल, ठेका, आवर्तन, सम, ताली, खाली व विभाग)

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 परिभाषाएं
3.3.1 श्रुति
3.3.2 स्वर
3.3.3 सप्तक
3.3.4 वर्ण
3.3.5 अलंकार
3.3.6 राग
3.3.7 आलाप
3.3.8 लय
3.3.9 लयकारी
3.3.10 मात्रा
3.3.11 ताल
3.3.12 ठेका
3.3.13 आवर्तन
3.3.14 सम
3.3.15 ताली
3.3.16 खाली
3.3.17 विभाग
3.4 सारांश
3.5 शब्दावली
3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची
3.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत– तबला में स्नातक (बी0ए0एम0एम0(एन)–120) प्रथम सेमेस्टर के प्रथम खण्ड की तृतीय इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप बता सकते हैं कि संगीत किसे कहते हैं। आप भारतीय संगीत के इतिहास से भी परिचित हो चुके होंगे।

प्रस्तुत इकाई में संगीत की विधाओं से सम्बन्धित मूलभूत परिभाषाओं(स्वर, श्रुति, आलाप, सप्तक, राग, आदि) के बारे में विस्तार से बताया जाएगा। जैसे स्वर क्या है? कितने स्वर होते हैं? श्रुति किसे कहते हैं, तथा बाईस श्रुतियों के नाम आदि।

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप संगीत की विधाओं से सम्बन्धित मूलभूत परिभाषाओं को समझ सकेंगे जिससे आपको भारतीय शास्त्रीय संगीत को समझने में आसानी होगी।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :–

- संगीत में प्रयोग होने वाले मूलभूत शब्दों के अर्थ को समझ सकेंगे।
- भारतीय शास्त्रीय संगीत में इन परिभाषाओं (श्रुति, स्वर, आलाप इत्यादि) के महत्व को समझ सकेंगे।
- इन मूलभूत शब्दों व इनके अन्तर को समझ कर, अपने गायन अथवा वादन में इनका सही प्रयोग कर सकेंगे।

3.3 परिभाषाएं

प्रस्तुत इकाई में संगीत (गायन तथा वादन) से सम्बन्धित निम्न परिभाषाओं को समझाया जा रहा है।

3.3.1 श्रुति – संगीतोपयोगी नाद जो कान को साफ–साफ सुनाई पड़े 'श्रुति' कहलाती है। शास्त्रकार श्रुति की परिभाषा इस प्रकार करते हैं– '' **श्रुयते इति श्रुतिः**'' अर्थात जो आवाज कान को सुनाई दे वह 'श्रुति' है। ध्यान से देखें तो यह परिभाषा अपने में पूर्ण नही है, क्योंकि संगीतोपयोगी आवाज को छोड़कर और भी आवाजें कान को सुनाई पड़ती है, पर वे श्रुति नहीं है। श्रुति की परिभाषा हम इस प्रकार कर सकते हैं – *''वह संगीतोपयोगी ध्वनि जो कानों को साफ–साफ सुनाई पड़े तथा जो एक–दूसरे से स्पष्ट तथा अलग पहचानने में आ सके, उसे श्रुति कहते हैं।''* अलग तथा स्पष्ट होने के कारण श्रुति की संख्या एक सप्तक में निश्चित हो पाती है। शास्त्रकारों ने एक सप्तक में कुल 22 श्रुतियॉ मानी हैं। 22 श्रुतियों के नाम हैं :–

1.	तीव्रा	9.	क्रोधा	17.	आलापिनी
2.	कुमुद्वती	10.	वज्रिका	18.	मदन्ती
3.	मन्दा	11.	प्रसारिणी	19.	रोहिणी
4.	छन्दोवती	12.	प्रीति	20.	रम्या
5.	दयावती	13.	मार्जनी	21.	उग्रा
6.	रंजनी	14.	क्षिति	22.	क्षोभिणी
7.	रक्तिका	15.	रक्ता		
8.	रौद्री	16.	संदीपनी		

3.3.2 स्वर – नियमित आन्दोलन संख्या वाली ध्वनि ''स्वर'' कहलाती है। यही ध्वनि संगीत में काम आती है, जो कान को मधुर लगती है तथा चित्त को प्रसन्न करती है। इस ध्वनि को संगीत की भाषा में ''नाद'' कहते हैं। इस आधार पर संगीतोपयोगी नाद 'स्वर' कहलाता है।

पं0 ओंकारनाथ ठाकुर ने अपनी कृति 'संगीतांजली' भाग–चार, पृष्ठ–3 पर स्वर की परिभाषा इस प्रकार दी है – ''वह अनुरणानात्मक नाद जो किसी प्रकार के आघात से उत्पन्न होता है, जो रंजक हो, जो श्रोत्रचित्त को सुख देने वाला हो, जो निश्चित श्रुति स्थान पर रहते हुए भी अपनी जगह से ऊपर या नीचे हटने पर विकृत होता है, और आत्मा की सुख–दःख आदि संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने में सहायक हो, उसे 'स्वर' कहते है''।

मुख्य स्वर सात होते हैं – **षडज(सा), ऋषभ (रे), गन्धार (ग), मध्यम (म), पंचम (प), धैवत (ध), निषाद (नी)**

स्वरों के प्रकार :–

स्वरों के मुख्य दो प्रकार माने जाते हैं।

1. शुद्ध स्वर
2. विकृत स्वर

1. **शुद्ध स्वर** – जब स्वर अपने निश्चित स्थान पर रहते हैं, *शुद्ध स्वर* कहलाते हैं। इनकी संख्या 7 मानी गयी है। इनके संक्षिप्त नाम हैं – **सा, रे, ग, म, प, ध, नि**।

2. <u>विकृत स्वर</u> – पॉच स्वर ऐसे होते हैं जो शुद्ध तो होते हैं साथ ही साथ विकृत भी होते हैं। जो स्वर अपने निश्चित स्थान से थोड़ा चढ़े अथवा उतरे हुए होते हैं, वे *'विकृत स्वर'* कहलाते हैं। इस प्रकार विकृत स्वर के भी दो प्रकार होते हैं – **क)** कोमल विकृत **ख)** तीव्र विकृत

जब कोई स्वर अपने निश्चित स्थान(शुद्धावस्था) से नीचा होता है तो उसे *'कोमल विकृत'* कहतें हैं और जब कोई निश्चित स्थान से ऊपर होता है तो उसे *'तीव्र विकृत'* कहते हैं। सप्तक में षड़ज और पंचम के अतिरिक्त शेष स्वर जैसे *रे, ग, ध, नि* स्वर कोमल विकृत तथा *म* तीव्र विकृत होता है। इस प्रकार एक सप्तक में 7 शुद्ध, 4 कोमल और 1 तीव्र स्वर, कुल मिलाकर 12 स्वर होते हैं। इनका क्रम इस प्रकार है :– *स, <u>रे</u>, रे, <u>ग</u>, ग, म, मॅ, प, <u>ध</u>, ध, <u>नी</u>, नि, सां*

स्वरों को एक और दृष्टिकोण से विभाजित किया गया है – 1. चल स्वर 2. अचल स्वर

1. <u>चल स्वर</u> – वे स्वर जो शुद्ध होने के साथ–साथ विकृत (कोमल अथवा तीव्र) भी होते है उन्हे चल स्वर कहते हैं। जैसे *रे , ग ध, नी* कोमल और *म* तीव्र।
2. <u>अचल स्वर</u> – जो स्वर सदैव शुद्ध होते हैं, विकृत कभी नहीं होते, अचल स्वर कहलाते हैं। जैसे – सा (षड़ज) और प (पंचम)।

<u>3.3.3 सप्तक</u> – सात स्वरों के समूह को जब एक क्रम में कहा जाता है अथवा लिखा जाता है, तब उसे सप्तक कहते हैं। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि सप्तक में सातों स्वर क्रमानुसार होते हैं। उदाहरण के लिए – सा, रे, ग, म, प, ध, नी यह एक सप्तक हैं। सप्तक में यह ध्यान रखा जाता है कि सातों स्वर एक दूसरे के बाद आऐं। एक सप्तक 'सा' स्वर से 'नि' स्वर तक होता है। अब इस 'नि' के बाद 'सा' आता है जो पहले सा से दुगुना ऊँचा होता है। इस रूप में दूसरा नया सप्तक प्रारम्भ होता है। इस नये सप्तक के सभी स्वर पहले सप्तक के स्वरों से दुगुने ऊँचे होते हैं।

इस प्रकार एक के बाद एक न जाने कितने सप्तक हो सकते हैं, परन्तु विद्वानों ने केवल तीन सप्तक माने हैं। कारण यह है कि साधारणतः मनुष्य की आवाज निम्न तीन सप्तकों के मध्य ही रहती है। केवल कुछ वाद्यों में इन तीनों सप्तकों के अतिरिक्त कुछ ऊपर तथा नीचे स्वर रहते हैं। मुख्य तीन सप्तक हैं :–

1. <u>मन्द्र सप्तक</u> – साधारण आवाज से दुगुनी नीची आवाज को मन्द्र सप्तक की आवाज कहते हैं। साधारण आवाज वह है जिसे बोलने अथवा जिन स्वरों को गाने में हमारे गले पर कोई जोर नहीं पड़ता। इससे दुगुनी नीची आवाज जिसमें स्वर लगाने से हृदय पर जोर पड़ता है, मन्द्र सप्तक की आवाज कहलाती है।
2. <u>मध्य सप्तक</u> – मध्य का अर्थ है बीच का। वह आवाज जो ना तो अधिक नीची होती है और न ही अधिक ऊँची, अर्थात् बीच की आवाज मध्य सप्तक की आवाज कहलाती है।
3. <u>तार सप्तक</u> – मध्य सप्तक से दुगुनी ऊँची आवाज को तार सप्तक की आवाज कहते हैं। इस सप्तक के स्वरों को गाने से हमारे तालु तथा मस्तिष्क पर प्रभाव पड़ता है।

<u>3.3.4 वर्ण–</u> गाने की प्रत्यक्ष क्रिया या स्वरों की विविध चलन को वर्ण कहते हैं. ये चार प्रकार के होते हैं। अभिनव राग मंजरी में कहा गया है, ''गान क्रियोच्यते वर्ण'' अर्थात् गाने की क्रिया को वर्ण कहते हैं। वर्ण – वर्ण का अर्थ है मोड। संगीत मे 4 प्रकार के वर्ण होते हैं।

आरोही वर्ण – केवल आरोह मात्र। तात्पर्य यह कि नीची आवाज को ऊँचाई की ओर ले जाना। फिर चाहे वह एक स्वर तक ही ऊँची क्यों न हो, आरोही वर्ण है।

अवरोही वर्ण – केवल अवरोह मात्र। ऊँची से नीची आवाज ले आना।
स्थाई वर्ण – एक ही जगह पर रुकते हुए कुछ देर तक कायम रहना। जैसे – ममम धध गग रेरे पप आदि।

संचारी वर्ण – ऊपर लिखे हुए तीनो वर्णों का मिला–जुला रूप। जहाँ से मन चाहा वहाँ को आवाज कि दिशा बदल दी या एक ही स्थान पर रुक गये।

<u>3.3.5 अलंकार–</u> संगीत रत्नाकर के अनुसार, नियमित वर्ण समूह को अलंकार कहते हैं। सरल शब्दों में, स्वरों की नियमानुसार उलट–पुलट रचना को अलंकार कहते हैं। । अलंकारों को पलटा भी कहा जाता हैं। संगीत गायन के अभ्यास का प्रथम चरण अलंकार होतें हैं। शास्त्रीय गायन तथा वादन के क्षेत्र मे विद्यार्थियों को सर्वप्रथम अलंकारो का अभ्यास करवाया जाता है। वाद्य के विद्यार्थियों को अलंकार के अभ्यास से वाद्य पर विभिन्न प्रकार से उंगलियां घुमाने की योग्यता हासिल होती है वहीं गायन क्षेत्र से जुड़े लोगो को इस के नियमित अभ्यास से कंठ मार्जन मे विशेष सहायता मिलती है।
अलंकारों की रचना में– प्रत्येक अलंकार में मध्य सप्तक के (सा) से तार सप्तक के (सां) तक आरोही वर्ण होता है जैसे– सारेग, रेगम, गमप, मपध, पधनी, धनीसां व तार सप्तक के (सां) से मध्य सप्तक के (सा) तक अवरोही वर्ण होता है जैसे– सांनिध, निधप, धपम, पमग, मगरे, गरेसा।
उदाहरणस्वरूप आरोही व अवरोही वर्ण साथ अलंकार–
आरोह –सारेगम, रेगमप, गमपध, मपधनि, पधनिसां।
अवरोह –सांनिधप, निधपम, धपमग, पमगरे, मगरेसा।

<u>3.3.6 राग</u> – स्वरों तथा वर्णों की वह अनुपम रचना, जिसे सुनकर आनन्द की प्राप्ति हो, राग कहलाती है। विद्वानों ने राग की परिभाषा इस प्रकार दी है :–

योऽसौ ध्वनि विशेषस्तु स्वरवर्ण विभूषितः।
रंजको जनचित्तानां स च रागः उदाहृतः। मतंग– बृहद्देशी, श्लोक 264।

अर्थात "ध्वनि की वह विशेष रचना जिसको स्वरों तथा वर्णों द्वारा विभूषित किया गया हो और सुनने वालों के चित्त को मोह ले, राग कहलाती है।" राग से विभिन्न रसों की अनुभूति होती है। इसलिए राग की परिभाषा में कहा गया है 'रसात्मक राग'। इस रसानुभुति से ही सुनने वालो को आनन्दानुभुति होती है।

प्राचीनकाल में राग के 10 लक्षण अथवा नियम माने जाते थे। इसलिए प्रत्येक राग को उन नियमों के अनुसार गाना पड़ता था तथा नियमों के विरूद्ध राग अशुद्ध माना जाता था। राग के प्राचीन 10 लक्षण अथवा नियम इस प्रकार हैं – ग्रह, अंश, न्यास, अपन्यास, औड़व, षाड़व, अल्पत्व, बहुत्व, मन्द्र और तार। इनमें से कुछ नियमों का जैसे – ग्रह, न्यास या अपन्यास का प्रचार आधुनिक समय में नहीं है। बाकी नियम आजकल भी प्रचलित हैं।

आधुनिक समय में राग के निम्नलिखित नियम या लक्षण माने जाते हैं :–
1. राग को किसी थाट से उत्पन्न होना चाहिए।
2. राग में कम से कम 5 स्वर होने आवश्यक है।
3. राग में आरोह तथा अवरोह दोनों आवश्यक है।
4. राग में वादी–संवादी स्वरों का होना आवश्यक है।
5. राग में रंजकता का होना आवश्यक है। राग की परिभाषा में दिया गया *'रंजको जन चिताना'* अर्थात रंजकता होने से ही सुनने वाले मुग्ध हो सकेंगे।
6. राग में कभी षड़ज स्वर वर्जित नहीं हो सकता। षड़ज स्वर को आधार स्वर माना जाता है।
7. राग में किसी रस की अभिव्यक्ति होनी चाहिए।

<u>राग की जातियां</u> – राग नियमों के अनुसार किसी राग में कम से कम 5 और अधिक से अधिक 7 स्वर हो सकते हैं। रागों में लगने वाले स्वरों की भिन्न–भिन्न संख्याओं के कारण रागों को अलग–अलग तीन विभागों में बॅाटा गया है। इन्ही को जातियां कहते हैं।

1. <u>सम्पूर्ण</u> – जिस राग में सातों स्वर लगे उसे सम्पूर्ण जाति का राग कहते हैं। जैसे – राग **बिलावल**
2. <u>षाड़व</u> – जिस राग में केवल 6 स्वर लगे उसे षाड़व जाति का राग कहते हैं। जैसे – राग **मारवा**
3. <u>औड़व</u> – जिस राग में केवल 5 स्वर लगे उसे औड़व जाति का राग कहते हैं। जैसे – राग **भूपाली**

परन्तु जैसा कि राग लक्षणों में आपने जाना कि राग में आरोह तथा अवरोह दोनों होने चाहिए, आरोह तथा अवरोह दोनों स्वरों की संख्या एक न हो तथा कम या अधिक हो, जैसे राग **खमाज** है। इसके आरोह में 'रे' वर्जित होने से 6 स्वर लगते हैं परन्तु अवरोह में 7 स्वर लगते हैं इसलिए आरोह–अवरोह का ध्यान रखते हुए तीन जातियों में से प्रत्येक को तीन–तीन उपजातियों में बांटा गया है जो इस प्रकार है :–

सम्पूर्ण	षाड़व	औड़व
सम्पूर्ण – सम्पूर्ण	षाडव – सम्पूर्ण	औड़व – सम्पूर्ण
सम्पूर्ण – षाड़व	षाड़व – षाड़व	औड़व – षाड़व
सम्पूर्ण – औड़व	षाड़व – औड़व	औड़व – औड़व

इस तरह कुल मिलाकर 9 जातियां होती हैं, जिनके अन्तर्गत प्रत्येक हिन्दुस्तानी राग रखा जा सकता है। ये जातियां उसके स्वरों की संख्या के साथ इस प्रकार है :–

1. सम्पूर्ण – सम्पूर्ण – आरोह में 7 स्वरअवरोह में भी 7 स्वर
2. सम्पूर्ण – षाड़व – आरोह में 7 स्वरअवरोह में 6 स्वर
3. सम्पूर्ण – औड़व – आरोह में 7 स्वरअवरोह में 5 स्वर
4. षाड़व – सम्पूर्ण – आरोह में 6 स्वरअवरोह में 7 स्वर
5. षाड़व – षाड़व – आरोह में 6 स्वरअवरोह में भी 6 स्वर
6. षाड़व – औड़व – आरोह में 6 स्वरअवरोह में 5 स्वर
7. औड़व – सम्पूर्ण – आरोह में 5 स्वरअवरोह में 7 स्वर
8. औड़व – षाड़व – आरोह में 5 स्वरअवरोह में 6 स्वर

औड़व – औड़व – आरोह में 5 स्वरअवरोह में भी 5 स्वर

<u>3.3.7 आलाप</u> – किसी राग के स्वरों का उसके वादी, संवादी तथा विशेष स्वरों को दिखलाते हुए विस्तार करना और साथ में उसे वर्ण, गमक, अलंकार, आदि से विभूषित करना, उस राग का 'आलाप' कहलाता है। राग का स्वरूप स्पष्ट करने के लिए उसके स्वरों को सजाकर धीमी लय में उसका आलाप करते हैं। आलाप द्वारा गायक अथवा वादक, राग के विशेष स्वरों व राग के स्वरूप को श्रोताओं के सम्मुख प्रस्तुत करता है और अपनी भावनाओं को राग के स्वरों द्वारा अभिव्यक्त करता है।

प्राचीन समय में आलाप करने के कई प्रकार प्रचलित थे, जो रागालाप, स्वस्थान–नियम, आलाप्तिगान, रूपकालाप आदि नामों से पुकारे जाते थे। किन्तु आधुनिक समय में आलाप गायन दो प्रकार से होता है – एक तो गीत गाने से पहले ताल रहित होता है, जिसे गायक नोम–तोम तथा न, न, री, द, त, न, आदि शब्दों द्वारा अथवा आकार में गाता है, तथा दूसरा गीत के साथ ताल–बद्ध होता है जिसे गायक आकार में अथवा गीत के बोलों के साथ गाता है।

<u>आधुनिक आलाप</u> – आधुनिक समय में गीत के पूर्व आलाप गायन का बहुत महत्व है। इस आलाप को हम चार भागों में बांट सकते हैं :–

1.<u>स्थाई</u> – इस भाग में गायक मध्य सप्तक से राग का आलाप शुरू करता है। एक–एक स्वर को बढ़ाते–घटाते हुए मन्द्र या मध्य सप्तक में इसका चलन होता है। अधिक से अधिक मध्य सप्तक के मध्यम या पंचम तक ही इसका विस्तार होता है।
2.<u>अन्तरा</u> – इस भाग में अधिकतर आलाप मध्य सप्तक के गन्धार, मध्यम अथवा पंचम स्वर से आरम्भ होता है तथा उसका विस्तार अधिक से अधिक मध्य सप्तक के निषाद अथवा तार षड़ज तक होता है।
3.<u>संचारी</u> – इस भाग में तार सप्तक के स्वरों का महत्व अधिक होता है। ख्याल गायक तथा वादक इस भाग में आलाप की लय बड़ा देता हैं। इसमें मींड़, आन्दोलन, गमक, खटका, मुर्की आदि का प्रयोग अधिक होता है तथा बीच–बीच में आलापों का सम दिखाया जाता है।
4.<u>आभोग</u> – यह आलाप का अन्तिम भाग होता है। इसमें तार–सप्तक के स्वरों का जहॉ तक सम्भव हो, प्रयोग करते हैं। इस विभाग में आलाप की गति द्रुत कर दी जाती है, जिसमें गमक का प्रयोग बहुत सुन्दर लगता हैं। गायक त, न, न, आदि शब्दों में तथा वादक झाला द्वारा विभिन्न लयकारियों को प्रस्तुत करता है।

<u>3.3.8 लय</u> – समय की समान गति को लय कहते हैं। संगीत में प्रयोग की जाने वाली गति को *'लय'* कहते है। ताल में एक क्रिया और दूसरी क्रिया के बीच की विश्रांति का काल, जो पहली क्रिया का विस्तार है, *'लय'* कहलाता है। गायन, वादन तथा नृत्य में कोई न कोई लय अवश्य होती है।

<u>लय की परिभाषाएं :</u>

- संगीत रत्नाकर के अनुसार – **'क्रियानान्तर विश्रांति लयः'** अर्थात क्रिया के अन्त में विश्रांति को लय कहते हैं।
- अमरकोश के अनुसार – **'क्रिया विश्रांति लयः'** अर्थात दो क्रियाओं के बीच के अन्तराल को लय कहते हैं।

यूं तो लय के अनगिनत प्रकार हैं, परन्तु लय को प्रधानतः तीन लयों में बांटा गया है :–
1. <u>विलम्बित लय</u> – जिस लय की चाल बहुत धीमी होती है उसे विलम्बित लय कहते हैं। जैसे – गायन विधा में बड़ा ख्याल, ध्रुपद, धमार तथा तंत्र वाद्य में मसीतखानी गत आदि।
2. <u>मध्य लय</u> – जो लय न ज्यादा धीमी और न ही द्रुत हो, अर्थात साधारण लय को 'मध्य लय' कहते हैं। जैसे – गायन विधा में छोटा ख्याल, भजन, ठुमरी तथा तंत्रवाद्य में रज़ाखानी गत और अधिकतर नृत्य में मध्य लय रहती है।
3. <u>द्रुत लय</u> – जिसकी गति बहुत तेज हो अर्थात द्रुत हो उसे द्रुत लय कहते हैं। यह लय मध्यलय से दुगुनी तथा विलम्बित लय से चौगुनी होती है। जैसे – गायन विधा में तराना, तंत्रवाद्यों में झाला तथा नृत्य में ततकार में द्रुत लय होती हैं।

इन लयों के बीच कोई निश्चित रेखा निर्धारित नहीं की जा सकती, इन्हे सापेक्षिक माना जाना चाहिए।

<u>3.3.9 लयकारी</u>– लयकारी की परिभाषा हम यह दे सकते हैं कि "संगीत में लय के विभिन्न दर्जे करने की क्रिया को लयकारी कहते हैं।" लय के दर्जे करने से तात्पर्य यह है कि कलाकार जब कलात्मक दृष्टि से कभी एक मात्रा में दो, तीन या चार मात्रा तथा कभी दो में तीन, चार में पाँच मात्रा पढ़कर/दिखाकर लय के चमत्कार का प्रदर्शन करता है तो इसी को लयकारी कहते हैं।

लय के समान ही लयकारी के भी विभिन्न प्रकार माने गए हैं परन्तु इसके भी दो मुख्य प्रकार हैं।

एक सीधी लयकारी होती है जिसके अन्तर्गत दुगुन, चौगुन अठगुन आदि आते हैं। दूसरी आड़ की लयकारी होती है जिसके अन्तर्गत तिगुन, आड़, कुआड़ तथा बिआड़ आदि लयकारियाँ आती हैं।

लयकारियों के अन्तर्गत बहुत प्रकार की लयकारियाँ हो सकती हैं परन्तु पाठ्यक्रम के अनुसार आप सीधी लयकारियों को ही जान सकेंगे। विभिन्न तालों में सीधी लयकारी से सम्बन्धित दुगुन, चौगुन को आप जानेंगे। तालों में लयकारी करने से पूर्व आड़ लयकारियों के सम्बन्ध में मात्र एक परिचय जानना आवश्यक सा प्रतीत होता है। सीधी लयकारी के अतिरिक्त अन्य प्रकार की लयकारी को जिसके अन्तर्गत एक मात्रा में डेढ़ मात्रा, तीन मात्रा या सवा मात्रा आदि आते हैं, आड़ की लयकारी कहते हैं। परन्तु व्यापक दृष्टि से वर्तमान में आड़ का व्यापक अर्थ हो चुका है। आड़ का विशेष रूप से यह अर्थ है कि वह लयकारी जिसमें एक मात्रा में डेढ़ या दो मात्रा में तीन मात्रा की लयकारी हो। एक मात्रा में डेढ़ हो या 2 मात्रा में 3 बात एक ही है। इसी प्रकार कुआड़ लयकारी के अन्तर्गत एक मात्रा में सवा मात्रा या 4 मात्रा में 5 मात्रा आती हैं। यह लयकारियाँ कठिन मानी जाती हैं। आप यहाँ तालों में सीधी लयकारी करना जान सकेंगे। तालों के विषय में आप सम्पूर्ण परिचय जान चुके है अब तालों की दुगुन, चौगुन लयकारियाँ जानेंगे।

<u>तीनताल की लयकारियाँ :</u>

<u>ठेका</u>

धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा	धा तिं तिं ता	ता धिं धिं धा	धा
X	2	0	3	X

<u>तीनताल की दुगुनः</u>

धा. धिं धिं. धा धा. धिं धिं .धा	धा तिं तिं ता ता धिं धिं धा	
X	2	
धा धिं धिं .धा धा .धिं धिं .धा	धा तिं तिं ता ता धिं धिं धा	धा
0	3	X

दुगुन लयकारी में प्रत्येक दो मात्राओं को एक बना दिया जाता है। जैसा आप पहले जान चुके हैं कि दुगुन लयकारी में एक मात्रा में दो मात्रा बोली जाती हैं। देखा जाए तो दुगुन में ताल दो बार पूरे चक्र के साथ बोली जाती है। दुगुन करते समय मात्राएँ एवं विभागों में कोई परिवर्तन नहीं होता है। मात्र दो बोलों को एक मात्रा मान लिया जाता है जैसा कि आपने तीनताल की दुगुन में देखा। दो मात्रा को एक करने के लिए इसके नीचे अर्द्धचन्द्राकार चिन्ह लगा देते हैं।

दुगुन करने की एक और पद्धति भी होती है जिसे 'एक आवर्तन में दुगुन करना' के नाम से सम्बोधित किया जाता है। आप जान चुके हैं कि पहले जो दुगुन की उसमें ताल का चक्र दो बार अर्थात दो आवर्तन में ताल का प्रयोग किया परन्तु एक आवर्तन में दुगुन करने के लिए मात्रा एवं विभाग तो वैसे ही रहेंगे परन्तु एक विशेष जगह से ताल की दुगुन शुरू की जाएगी तथा ताल की दो बार पुनरावृत्ति नहीं होगी। उदाहरण के लिए आप एक आवर्तन में तीनताल की दुगुन को जानेंगे।

<u>एक आवर्तन में तीनताल की दुगुनः</u>

धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा धा धिं धिं धा	धा तिं तिं ता ता धिं धिं धा	धा
	2	0	3	X

<u>तीनताल की चौगुन लयकारीः</u>

धाधिंधिंधा धाधिंधिंधा धातिंतिंता ताधिधिंधा	धाधिंधिंधा धाधिंधिंधा धातिंतिंता ताधिधिंधा	
X	2	
धाधिंधिंधा धाधिंधिंधा धातिंतिंता ताधिधिंधा	धाधिंधिंधा धाधिंधिंधा धातिंतिंता ताधिधिंधा	धा
0	3	X

<u>एक आवर्तन में तीनताल की चौगुनः</u>

धा	धिं	धिं	धा	धा	धिं	धिं	धा	
X				2				
धा	तिं	तिं	ता	धाधिंधिंधा	धाधिंधिंधा	धातिंतिंता	ताधिधिंधा	धा
0				3				X

तीनताल की चौगुन 13वीं मात्रा से प्रारम्भ होगी तथा 4 मात्राओं में पूरी चौगुन आ जाएगी। चौथे विभाग की चार मात्राओं में चौगुन पूर्ण रूप में आ जाएगी।

3.3.10 मात्रा – संगीत में समय नापने के लिए जिस इकाई का प्रयोग किया जाता है उसे मात्रा कहते हैं। मात्राओं के आधार पर तालों की रचना होती है। प्रत्येक ताल अपनी निश्चित मात्रा एवं बोलों के आधार पर पहचानी जाती है। जैसे– तीनताल में 16 मात्राएँ व एकताल में 12 मात्राएँ होती हैं। मात्राओं के आधार पर विभिन्न लयकारियाँ की जाती हैं। गीत रचनाओं में विशेष रूप से मात्राओं के आधार पर पता चलता है कि कौन सी रचना किस मात्रा से प्रारम्भ है तथा किस मात्रा में सम तथा खाली है। बंदिशों का आरम्भ भी अलग–अलग मात्राओं से होता है।

गीत रचनाओं एवं बंदिश के विषय में आप जान चुके हैं कि राग की वह शब्द रचना जो विभिन्न तालों में निबद्ध होती है, बंदिश कहलाती है। ताल पक्ष से सम्बन्धित वाद्यों पर बजने वाली बदिंशों के विषय में भी यहाँ बताना आवश्यक है। वाद्यों पर बजने वाली स्वर एवं तालबद्ध रचनाओं को 'गत' कहा जाता है। गत कई प्रकार की होती हैं। गतें विलम्बित एवं मध्य लय में बजायी जाती हैं। इनमें लयकारियाँ भी की जाती है। एक गत में पाँच मात्रा के मुखड़े लेने का भी चलन है। यह गतों की ताल पक्ष सम्बन्धी कुछ जानकारी थी।

3.3.11 ताल – विभिन्न मात्राओं के समूह को ताल कहते हैं। संगीत में केवल मात्रा से काम पूरा नहीं होता है। क्योंकि मात्राएं केवल समय की गति का बोध कराती है। अतः मात्राओं को नापने के लिए ताल बनाए गए। स्वर और लय, संगीत रूपी भवन के दो स्तम्भ हैं। किसी एक की अनुपस्थिति में यह भवन अधूरा रहता है। लय से मात्रा और मात्रा से ताल बने। जैसे *झपताल, एकताल, चारताल, रूपक, तीनताल* आदि।

विभिन्न तालों की रचना गीत के प्रकारों के आधार पर हुई है। जैसे ख्याल के लिए तीनताल, एकताल, झपताल, तिल़वाड़ा आदि; ठुमरी के लिए दीपचन्दी तथा जतताल; ध्रुपद के लिए चारताल, सूलताल, ब्रहमताल आदि व धमार (होली) के लिए धमार ताल बनाया गया। ताल देने के लिए मुख्यतः तबला और पखावज का प्रयोग किया जाता है। ताल को हस्त क्रियाओं से भी प्रदर्शित कर सकते हैं। प्रत्येक ताल के कुछ निश्चित बोल होते हैं, जो तबले अथवा पखावज पर बजाये जाते हैं। बोल धा, ना, धी, किट, तक, गदि गन, तिरकिट आदि वर्णों से निर्मित होते हैं।

<u>ताल की परिभाषाएं</u> :

- कुछ निश्चित मात्राओं के उस समूह को ताल कहते हैं जो धा, ना, धी, धिं, किट, तक, गदि, गन, तिरकिट आदि वर्णों से निर्मित होते हैं, और जो तबला–पखावज आदि वाद्यों पर बजाए जाते हैं।
- आचार्य शारंगदेव के अनुसार :

  तालस्तल प्रतिष्ठायाम् इति धार्तोधञि स्मृतः।
  गीतं वाद्यं तथा नृत्यं यतस्ताले प्रतिष्ठितम्।।

  अर्थात गीत, वाद्य एवं नृत्य की प्रतिष्ठा ताल से हुई है तथा प्रतिष्ठा वाचक धातु रुप *तल* से ताल की उत्पत्ति हुई है।
- भरत मुनि के अनुसार – *"संगीत में गायन व वादन की लंबाई नापने का साधन, ताल है"*।
  "ताल का मुख्य उद्देश्य संगीत में लय कायम करना है"।

<u>3.3.12 ठेका</u> – प्रत्येक ताल के कुछ निश्चित बोल होते है, जिसे ठेका कहते हैं।
उदाहरण : दादरा ताल का ठेका – **धा धी ना । धा तू ना**
झपताल का ठेका – **धी ना । धी धी ना। ती ना। धी धी ना**

ताल की मात्रा, चलन, विभाग आदि में परिवर्तन ना करते हुए किसी ताल के ठेके को विभिन्न प्रकार से बजाने को ठेके की किस्म कहते हैं।
जैसे – **धा धी नाना । धा तू नाना** बजाने से दादरा ताल की एक किस्म होगी।

<u>3.3.13 आवर्तन</u> – किसी भी ताल के ठेके को पूरा एक बार बजाने से एक आवृति पूरी होती है, इसी को आवर्तन कहते हैं। इस प्रकार जितनी बार पूरे ठेके को बजाऐंगे उतने ही आवर्तन पूरे होंगे। उदाहरण के लिए तीनताल का एक आवर्तन :

धा	धिं	धिं	धा	।	धा	धिं	धिं	धा	।	धा	तिं	तिं	ता	।	ता	धिं	धिं	धा	। धा
×					**2**					**0**					**3**				×

<u>3.3.14</u> <u>सम</u> – भातखण्डे ताललिपि पद्धति में सम के लिए ×ⁿ का चिन्ह लगाया जाता है। सम का अर्थ होता है ताल का आरम्भ। गायन, वादन, नृत्य में सम का सबसे महत्वपूर्ण स्थान होता है। प्रत्येक ताल की पहली मात्रा को सम कहा जाता है। जैसे तीनताल का सम पहली मात्रा पर ही होगा। संगीत के अन्तर्गत सभी विधाओं में सम पर जोर देकर विशेष रूप से सिर हिलाकर सम के स्थान को दर्शाया जाता है। गायक–वादक अपनी प्रस्तुति देते हुए विभिन्न स्वर, लय की क्रियाएँ करते हुए संगतकार के साथ सम पर आकर मिल जाते हैं। सम पर विशेष रूप से ताली होती है, यही पहली मात्रा भी है। ताल का एक निश्चित क्रम होता है। प्रत्येक बार क्रम पूरा होते ही सम आ जाता है, जैसे 10 मात्रा की ताल है तो पहली मात्रा पर सम के बाद क्रम लगातार चलता रहता है तथा प्रत्येक बार अंत में 10 मात्रा के बाद पहली मात्रा पर सम निरन्तर आते रहता है। संगीत में सम एक ऐसा स्थान होता है जिसका आनन्द संगीतकार व श्रोता दोनों लेते हैं।

<u>3.3.15 ताली</u> – सम एवं अन्य विभागों की प्रथम मात्रा पर खाली के अतिरिक्त जहॉ हाथ से आघात द्वारा ध्वनि उत्पन्न करते हैं, उसे ताली कहते हैं। जैसे तीनताल में *1, 5 व 13* पर।

<u>3.3.16 खाली</u> – विभाग की प्रथम मात्रा में जहॉ ध्वनि न करके केवल हाथ बांई या दांई ओर झुका दिया जाता है उसे खाली कहते हैं। इसको 0 से प्रदर्शित करते है। जैसे पंचमसवारी में 8 वीं पर।

<u>3.3.17 विभाग</u> – प्रत्येक ताल अथवा तालबद्ध रचना कुछ छोटे–छोटे भागों में विभाजित होती है, जिन्हे विभाग कहते हैं। प्रत्येक ताल के विभागों की संख्या निश्चित होती है, क्योंकि किसी ताल के बोल के जितने भाग स्वाभाविक ढ़ंग से हो सकते हैं, उतने ही विभाग माने गए। **उदाहरण** : झपताल के ठेके को बोलते समय उसके चार हिस्से स्वतः बन जाते हैं।

1. धी ना
2. धी धी ना
3. ती ना
4. धी धी ना

प्रत्येक विभाग अधिकतर दो, तीन, चार, अथवा पॉच मात्राओं का होता है। विभाग का उद्देश्य यह है कि गायक अथवा वादक को हाथ से ताल देने से यह पता चलता रहे कि वह ताल की किस मात्रा पर है।

अभ्यास प्रश्न

(अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति :

1. एक सप्तक में कुल––––––––––––––– श्रुतियां होती हैं।
2. जब स्वर अपने निश्चित स्थान पर होते हैं तो––––––––––––– कहलाते हैं।
3. राग की कुल–––––––––––––– जातियां होती हैं।
4. सप्तक में –––––––––––––– स्वर होते हैं।
5. समान गति को–––––––––––––– कहते हैं।

(ब) वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. 'श्रुयते इति श्रुतिः किसकी परिभाषा है ?

क) नाद खब) आलाप ग) स्वर घ) श्रुति

2. स्वर के कितने प्रकार हैं ?

क)पॉच ख) दो ग) तीन घ) चार

3. राग नियमों के आधार पर किसी राग में कम से कम और अधिक से अधिक कितने स्वर होने चाहिए ?

क)5, 7 ख) 3, 5 ग) 2, 7 घ) 4, 5

4. विभिन्न मात्राओं के समूह को क्या कहते हैं ?

क)लय ख) विभाग ग) ताल घ) आवर्तन

5. किसी ताल के ठेके को पूरा एक बार बजाने को क्या कहते हैं ?

क) ठेका ख) लयकारी ग) विभाग घ) आवर्तन

(स) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. श्रुति को परिभाषित करें।
2. राग की व्याख्या कीजिए।
3. लय से आप क्या समझते हैं?

3.4 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के उपरान्त आप संगीत, गायन तथा वादन में प्रयोग होने वाले शब्दों की परिभाषा व अर्थ को जान चुके होंगे। गायन के अन्तर्गत प्रयोग होने वाले स्वर, श्रुति, आलाप, सप्तक, इत्यादि के महत्व को जान चुके होंगे। इसके अतिरिक्त इन मूलभूत शब्दों जैसे – श्रुति, स्वर, ताली, खाली, आलाप, राग इत्यादि का अन्तर समझ कर गायन व वादन में उचित प्रयोग कर सकेंगे।

3.5 शब्दावली

1. संगीतोपयोगी – संगीत के लिए उपयुक्त
2. कृति – रचना
3. श्रोत्रचिन्त – सुनने वाले का हृदय
4. संवेदना – भावानुभूति
5. आन्दोलन – कम्पन
6. वर्ण – गाने की क्रिया
7. रंजकता – मधुरता।
8. ताल रहित – बिना ताल के
9. विभूषित – सजाना

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

(अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति :

1. 22 2. शुद्ध स्वर 3. 9 4. 7 5. लय

(ब) वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. (घ) श्रुति 2. (ख) दो (शुद्ध, विकृत) 3. (क) 5, 7
4. (ग) ताल 5. (घ) आवर्तन

3.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रीवास्तव, श्री हरीश चन्द्र, *राग परिचय भाग 1 व 2*, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. वसन्त, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
3. परांजपे, श्रीधर, *संगीत बोध*।
4. गोवर्धन, श्रीमती शान्ति, *संगीत शास्त्र दर्पण*।

3.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. *संगीत* मसिक पत्रिका, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. चौधरी, डा0 सुभाष रानी, *संगीत के प्रमुख शास्त्रीय सिद्धान्त*, कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
3. बंसल, डॉ0 परमानन्द, *संगीत सागरिका*, प्रासंगिक पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. राग तथा आलाप की परिभाषा को विस्तार से समझाइए।
2. श्रुति तथा स्वर को समझाइए।
3. ताल एवं लय का सविस्तार वर्णन कीजिए।

इकाई 4 – संगीतज्ञों का जीवन परिचय (पं0 वी0एन0 भातखण्डे, पं0 वी0डी0 पलुस्कर व सदारंग–अदारंग)

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 संगीतज्ञों का जीवन परिचय
 4.3.1 पं0 वी0 एन0 भातखण्डे
 4.3.2 पं0 वी0 डी0 पलुस्कर
 4.3.3 सदारंग–अदारंग
4.4 सारांश
4.5 शब्दावली
4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची
4.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (बी0ए0एम0एम0(एन)–120) के प्रथम सेमेस्टर के प्रथम खण्ड की चतुर्थ इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप बता सकते है कि संगीत किसे कहते हैं? आप भारतीय संगीत के इतिहास, सांगीतिक शब्दों की परिभाषा तथा स्वर वाद्य, ताल वाद्य एवं विभिन्न वाद्यों की संरचना एवं मिलाने की विधि से भी परिचित हो चुके होंगे।

प्रस्तुत इकाई में देश के कुछ प्रतिष्ठित संगीतज्ञों के जीवन से आपको परिचित कराया जाएगा, जिन्होंने संगीत के प्रचार–प्रसार में अपना बहुमूल्य योगदान दिया।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप यह जान पाऐंगे कि इन संगीतज्ञों ने संगीत के क्षेत्र में क्या–क्या शोध किए जिनसे भारतीय संगीत जगत लाभान्वित हुआ?

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप :–

- पं0 वी0एन0 भातखण्डे जी, पं0 वी0डी0 पलुस्कर जी व सदारंग–अदारंग जी के व्यक्तित्व के बारे में जान सकेंगे।
- भारतीय संगीत के प्रचार–प्रसार के लिए इनके योगदान के विषय में जान सकेंगे।
- जान सकेंगे कि इन्होंने क्या आविष्कार व रचनाएं की।
- इन महान संगीतज्ञों के जीवन परिचय एवं भारतीय संगीत में योगदान से प्रेरणा ले सकेंगे।

4.3 संगीतज्ञों का जीवन परिचय

संगीतज्ञों का जीवन परिचय, संगीत के विद्यार्थियों के लिए अत्यन्त उपयोगी होता है। उन्हें इससे संगीत साधना के मार्ग में आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलती है और उनको आदर्श मानकर उनके पद चिन्हों पर चलने की शक्ति प्राप्त होती है।

2.3.1 पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे :–

प्रारम्भिक जीवन – पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे का जन्म **10 अगस्त सन् 1860** का बम्बई प्रान्त के बालकेश्वर नामक स्थान में कृष्ण जन्माष्टमी के दिन हुआ था। उन्हें अपने पिता से, जिन्हें संगीत से विशेष प्रेम था, संगीत सीखने की प्रेरणा मिली। अतः आप विद्यालयी शिक्षा के साथ–साथ संगीत शिक्षा भी ग्रहण करते रहे। आपने सितार, गायन और बांसुरी की शिक्षा प्राप्त की और तीनों का अच्छा अभ्यास भी किया। आपने सेठ बल्लभ दास से सितार और गुरूराव बुआ बेलबाथकर, जयपुर के मोहम्मद अली खां, ग्वालियर के पं0 एकनाथ, रामपुर के कस्बे अली खां से गायन सीखा। सन् 1883 में बी0ए0 और 1890 में एल0एलबी0 की परीक्षायें उत्तीर्ण की। कुछ समय तक आपने वकालत भी की, किन्तु संगीत के महान प्रेमी का मन वकालत में नहीं लगा।

कार्य – वकालत छोड़कर आप संगीत सेवा में लग गए। सर्वप्रथम संगीत के शास्त्रीय पक्ष की ओर संगीतज्ञों का ध्यान आकर्षित करने का श्रेय आपको ही है। उनके समय के संगीतज्ञ, संगीत–शास्त्र पर बिल्कुल भी ध्यान नही देते थे। अतः उनके गायन–वादन में बड़ी विषमताएं आ गई थी। अतः आपने देश के विभिन्न भागों का भ्रमण किया और संगीत के प्राचीन ग्रन्थों की खोज की। यात्रा में जहॉ भी आपको संगीत का जो भी विद्वान मिला उनसे आप तुरन्त मिलने गए, उनसे भावों का आदान–प्रदान किया और जो कुछ भी ज्ञान धन देकर, सेवा कर अथवा शिष्य बनकर प्राप्त हो सका, आपने बिना संकोच उनसे वह ज्ञान प्राप्त किया। कहीं–कहीं आपको बहुत दिक्कतें हुयी, किन्तु फिर भी विभिन्न रागों के बहुत से गीत एकत्रित किए और उनकी स्वरलिपि 'भातखण्डे क्रमिक पुस्तक मालिका'–6 भागों में संग्रहित कर संगीत प्रेमियों के लिए संगीत की रचनाओं का अथाह भण्डार सुरक्षित कर दिया। उस समय किसी व्यक्ति को केवल एक गीत सीखने के लिए सालों तक अपने गुरू की सेवा करनी पड़ती थी। अतः ऐसे समय में क्रमिक पुस्तकों से संगीत के विद्यार्थियों को बहुत लाभ पहुॅचा।

क्रियात्मक संगीत को लिपिबद्ध करने के लिए भातखण्डे जी ने एक सरल और नवीन स्वरलिपि की रचना की, जो भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति के नाम से प्रसिद्ध है। उत्तरी हिन्दुस्तान में यही पद्धति प्रचलन में है। यह पद्धति अन्य की तुलना में सरल और सुबोध है।

इसके अतिरिक्त राग वर्गीकरण का एक नवीन प्रकार – थाट राग वर्गीकरण को प्रचारित करने का श्रेय भी भातखण्डे जी को ही जाता है। आपने वैज्ञानिक ढ़ंग से समस्त रागों को 10 थाटों में विभाजित किया। उनके समय में राग–रागिनी पद्धति प्रचलित थी। उन्होंने उसकी कमियों को समझा और उसके स्थान पर थाट पद्धति का प्रचार किया तथा काफी स्थान पर बिलावल को शुद्ध थाट माना।

जिस समय भारत में रेडियो का प्रचार नहीं था उस समय भातखण्डे जी ने संगीत के प्रचार हेतु संगीत–सम्मेलनों की कल्पना की और सन् 1916 में बड़ौदा नरेश की सहायता से प्रथम संगीत–सम्मेलन सफलता पूर्वक आयोजित किया। सन् 1925 तक आप पॉच वृहद संगीत सम्मेलन

आयोजित कर चुके थे। आपके प्रयासों से कई संगीत विद्यालयों की स्थापना हुई। जिनमें लखनऊ का *''मैरिस म्यूजिक कालेज* (अब *भातखण्डे संगीत महाविद्यालय*), ग्वालियर का *''माधव संगीत महाविद्यालय''* तथा बड़ौदा का *'म्यूजिक कालेज* विशेष उल्लेखनीय है।

आपके द्वारा रचित मुख्य पुस्तकों की सूची इस प्रकार है :–

- भातखण्डे क्रमिक पुस्तक मालिक–6 भागों में
- भातखण्डे संगीत शास्त्र–4 भागों में
- अभिनव राग मंजरी, अभिनव ताल मंजरी
- श्रीमल्लक्ष्य संगीत
- स्वरमालिका, गीत मालिका

मृत्यु – इस प्रकार अपने अथक परिश्रम द्वारा संगीत की महान सेवा कर और भारतीय शास्त्रीय संगीत को एक नए प्रकाश से आलोकित कर आप **19 सितम्बर 1936** का परलोक वासी हो गए।

4.3.2 पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर :–

Pt. Visnu Digambar Paluskar
1872-1931
(Gwalior)

जन्म व शिक्षा – ग्वालियर घराने के प्रसिद्ध संगीतज्ञ पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर का जन्म **18 अगस्त सन् 1872**, श्रावण पूर्णिमा को *कुरून्दवाड़* रियासत के बेलगॉव नामक स्थान में हुआ। आपके पिता का नाम दिगम्बर गोपाल और माता का नाम गंगा देवी था। आपके पिता एक अच्छे कीर्तनकार थे। उन्होंने आपको एक अच्छे विद्यालय में भेजना शुरू किया, किन्तु दुर्भाग्यवश दीपावली के दिन आतिशबाजी से आपकी ऑखें खराब हो गई। परिणामस्वरूप अध्ययन बन्द कर देना पड़ा। ऑख के बिना कोई उचित धंधा न मिलने के कारण आपके पिता ने आपको संगीत सिखाना शुरू किया। आपको मिरज के पंडित बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर के पास संगीत शिक्षा ग्रहण करने के लिए भेज दिया। वहॉ मिरज रियासत के तत्कालीन महाराजा ने आपको आश्रय दिया।

एक हृदय विदारक घटना – एक बार मिरज में एक सार्वजनिक सभा आयोजित हुई और रियासत के प्रतिष्ठित व्यक्तियों को निर्मन्त्रित किया गया। पं0 विष्णु दिगम्बर जी को राजाश्रय् प्राप्त होने के कारण आमंत्रित तो किया गया, परन्तु उनके गुरू को नहीं बुलाया गया। आपने जब उन्हें न बुलाए जाने का कारण जानना चाहा तो पता चला कि उन्हें समाज में प्रतिष्ठित नहीं समझा जाता था क्योंकि वे एक संगीतकार थे। उस काल में संगीतकारों को निम्न श्रेणी का समझा जाता था। समाज में संगीतकारों की यह दयनीय दशा देखकर आप बहुत दुखी हुए। आपने इस स्थिति को सुधारने, समाज में संगीत को उच्च स्थान दिलाने तथा संगीत का प्रचार–प्रसार करने का दृढ़ निश्चय किया।

कार्य – संगीत का प्रचार–प्रसार करने के लिए आपने सर्वप्रथम श्रृंगार रस के शब्दों की जगह भक्ति रस के शब्दों को रखकर संगीत के कुछ विद्यालय स्थापित किए जहॉ लोगों को संगीत की समुचित शिक्षा दी जा सके। आपने **5 मई 1901** को प्रथम संगीत विद्यालय "गंधर्व महाविद्यालय" की स्थापना लाहौर में की। शुरू में कई दिनों तक कोई भी व्यक्ति विद्यालय में प्रवेश के लिए नहीं आया, किन्तु आप निराश नहीं हुए। विद्यालय के समय वे स्वयं तानपुरा लेकर अभ्यास करते रहते थे। कुछ दिनों बाद विद्यार्थियों की संख्या धीरे–धीरे बढती चली गई। सन् 1908 में आपने गन्धर्व महाविद्यालय की एक शाखा बंबई में खोली। वहॉ पर आपको लाहौर की तुलना में अधिक सफलता मिली।

वैदिक काल में प्रचलित आश्रम प्रणाली के आधार पर आपने लगभग सौ शिष्यों को तैयार किया। आपके अधिकांश शिष्य आपके साथ रहते थे। उनके खाने, पीने, रहने तथा शिक्षा का प्रबन्ध आप निःशुल्क करते थे। आपके शिष्यों में *स्व0 वी0एन0 कशालकर, स्व0 पं0 ओंकारनाथ ठाकुर, स्व0 पं0 बी0आर0 देवधर, स्व0 वी0एन0 पटवर्धन* आदि नाम उल्लेखनीय हैं।

उस समय तक गीत को लिखने के लिए कोई स्वरलिपि पद्धति नहीं थी। इसलिए आपने एक स्वरलिपि पद्धति की रचना की जो विष्णु दिगम्बर स्वरलिपि पद्धति के नाम से जानी जाती है।

आपके 12 पुत्र हुए उनमें से 11 पुत्रों की मृत्यु बाल्यावस्था में ही हो गई, केवल एक पुत्र श्री डी0वी0 पलुस्कर अपने समय के अच्छे गायक हुए।

<u>आपके द्वारा रचित पुस्तकें</u> – *संगीत बाल प्रकाश, राग प्रवेश* बीस भाग में, *संगीत तत्व–दर्शक, संगीत शिक्षा, महिला संगीत, भजनामृत लहरी* आदि। जनता में शीघ्र संगीत का प्रचार करने के लिए कुछ समय तक आपने *'संगीतामृत प्रवाह'* नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन भी किया।

<u>मृत्यु</u> – 1930 में आपको लकुवा मार गया, फिर भी अपनी कार्य क्षमता के अनुकूल आप संगीत की सेवा करते रहे। अन्त में **21 अगस्त सन् 1931** को आपने अपने प्राण त्याग दिए।

<u>4.3.3 सदारंग–अदारंग :–</u>

<u>जन्म व शिक्षा</u> – बहादुर शाह प्रथम के पौत्र मुहम्मद शाह रंगीले के काल में संगीत की दो विलक्षण विभूतियों का परिचय प्राप्त होता हैं–नियामत खॉ (सदारंग) व फिरोज़ खॉ (अदारंग)। ख्याल की बहुत सी रचनाओं में 'सदारंगीले मोंमदसा' ऐसा नाम कई बार देखने में आता है। 18 वीं शताब्दी में नियामत खॉ नाम के प्रसिद्ध बीनकार हुए। ये अपनी बनाई हुई रचनाओं में उस समय के बादशाह मुहम्मद शाह का नाम दे दिया करते थे। बादशाह को प्रसन्न करने के लिए ही वे ऐसा किया करते थे। नियामत खॉ अपना उपनाम 'सदारंगीले' रखकर साथ में बादशाह का नाम भी जोड़ दिया करते थे। 'सदारंगीले' को ही 'सदारंग' भी कहा जाता था। नियामत खॉ (सदारंग) के खानदान के बारे में बताया जाता है कि ये तानसेन की पुत्री के खानदान में दसवें व्यक्ति थे। इनके पिता का नाम लाल खॉ सानी और बाबा का नाम खुशाल खॉ था।

<u>कार्य</u> – यद्यपि ख्याल रचना का कार्य सर्वप्रथम अमीर खुसरो ने शुरू किया था। किन्तु उस समय ख्याल रचना विशेष लोकप्रिय नहीं हो सकी। इसके बाद सुल्तान हुसैन शर्की, बाजबहादुर, चंचलसेन, चांद खॉ तथा सूरज खॉ ने भी यह कार्य करने की चेष्टा की, किन्तु उन्हें भी विशेष सफलता नहीं मिल सकी। नियामत खॉ ने उनकी इन असफलताओं का कारण ढूँढ निकाला। इन्होंने अनुभव किया कि जब तक कविताओं में बादशाह का नाम नहीं डाला जाएगा तब तक वे अच्छी तरह प्रचलित नहीं हो सकेंगी। साथ ही उन्हें रूठे हुए बादशाह को भी खुश करना था, क्योंकि वेश्याओं को तालीम न देने पर बादशाह नाराज हो गए थे। अतः वे उपनाम 'सदारंगीले' के साथ बादशाह का नाम तो डालने लगे, किन्तु इसकी खबर बादशाह को नहीं लगने दी कि यह कविताएं किसकी बनाई हुई हैं और सदारंग कौन हैं। इस प्रकार बहुत सी कविताएं नियामत खॉ ने तैयार करके अपने शागिर्दों को भी तैयार करवाई। जब बादशाह को यह कविताएं ख्याल में गाकर सुनाई गई, तो वे बड़े प्रभावित हुए और ये जानने की इच्छा प्रकट की कि यह सदारंगीले कौन है। नियामत खॉ के शागिर्दों ने जवाब दिया कि हमारे उस्ताद जिनका नाम नियामत खॉ है उनका तखल्लुस (उपनाम) सदारंगीले है। बादशाह ने कहा कि अपने उस्ताद को बुला कर लाओ। नियामत खॉ दरबार में उपस्थित हुए तो बादशाह मुहम्मद शाह ने उनके पुराने अपराधों को क्षमा कर दिया और उन्हे पुनः आदरपूर्वक अपने दरबार में रख लिया। आप वीणा बजाकर गायकों की संगत करने के लिए स्थायी रूप से दरबार में रहने लगे। इस प्रकार सदारंग ने पुनः अपना रंग जमाकर आदर प्राप्त कर लिया।

सदारंग के ख्यालों में विशेष रूप से श्रृंगार रस पाया जाता है। कहा जाता है कि सदारंग ने स्वयं अपनी रचनाएं महफिलों में नहीं गाई। उनका कहना था कि खुद अपने लिए या अपने खानदान के लिए उन्होंने ये रचनाएं नहीं बनाई हैं, बल्कि बादशाह सलामत को खुश करने के उद्देश्य से ही इनकी रचना की गई है। इस तरह आपकी रचनाएं समाज में फैल गई और ख्याल गायक व गायिकाओं ने आपकी रचनाएं सुनी और अपनाई।

आपने भारतीय शास्त्रीय संगीत को नए आयाम दिए। आप बीनकार और ख्याल रचयिता के साथ–साथ अच्छे वाग्गेयकार भी थे। आपने गायक की कल्पना के स्रोतों को और आगे की ओर ले जाने में मदद की। जैसे गमक के विचित्र प्रकार के लगाव, मीड़ का वैचित्र, आलापचारी का ढंग तथा उसकी बढ़त के विभिन्न रंग आदि।

सदारंग के साथ–साथ कुछ रचनाओं में अदारंग का नाम भी आता है। इसके बारे में कहा जाता है कि नियामत खॉ के दो पुत्र थे, जिनका नाम फिरोज खॉ और भूपत खॉ था। फिरोज खॉ का ही उपनाम 'अदारंग' है। भूपत खॉ का उपनाम 'महारंग' था। इस प्रकार पिता के साथ–साथ दोनों पुत्र भी संगीत के क्षेत्र में अपना नाम सदा के लिए अमर कर गए।

अभ्यास प्रश्न

(अ) वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. 'मैरिस म्यूजिक कालेज' की स्थापना किसने की?
क)पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर ख) पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे
ग) सदारंग घ) अदारंग
2. नियामत खॉ व फिरोज़ खॉ किस राजा के काल के थे?
क)अकबर ख) जहॉगीर
ग) मुहम्मद शाह रंगीले घ) बहादुर शाह ज़फर
3. उपनाम 'अदारंग' से किसकी रचनाएं हैं?
क)फिरोज खॉ ख) भूपत खॉ
ग) नियामत खॉ घ) पं0 वी0एन0 भातखण्डे
4. पं0 ओंकार नाथ ठाकुर किसके शिष्य थे?
क)पं0 वी0एन0 भातखण्डे ख) पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर
ग) फिरोज खॉ घ) भूपत खॉ

(ब) रिक्त स्थानों की पूर्ति :

1. पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे जी ने समस्त रागों को —————— थाट में विभाजित किया।
2. अभिनव राग मंजरी —————————————————— ने लिखी है।
3. पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी के पिता का नाम ———————————————— था।
4. पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी ने ———————————— से संगीत की शिक्षा ग्रहण की।
5. अदारंग (फिरोज़ खॉ), सदारंग (नियामत खॉ) जी के ———————————— थे।

(स) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. पं0 भातखण्ड़े जी के कार्यों के बारे में बताइए।
2. सदारंग–अदारंग का भारतीय शास्त्रीय संगीत में क्या योगदान रहा? बताइए।

4.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप भारतीय शास्त्रीय संगीत के महान संगीतज्ञों के सांगीतिक जीवन व इससे जुड़े महत्वपूर्ण तथ्यों के बारे में जान चुके होंगे। आप यह जान चुके होंगे कि इन संगीतज्ञों ने किन विषम परिस्थितियों में संगीत का प्रचार–प्रसार किया व किस तरह इसे जन–जन तक पहॅुचाया। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप यह भी जान चुके होंगे कि जो संगीत

शिक्षा केवल गुरू शिष्य परम्परा तक ही सीमित थी तथा हर व्यक्ति के लिए उसे सीख पाना लगभग असम्भव सा था। उस शिक्षा को पं0 भातखण्डे जी और पं0 पलुस्कर जी ने संगीत विद्यालयों की स्थापना कर जन सुलभ बनाया। पं0 भातखण्डे व पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर द्वारा निर्मित स्वरलिपि पद्धतियों व रचित पुस्तकों के बारे में भी आप जान चुके होंगे। इसके अतिरिक्त आप यह भी जान चुके होंगे कि सदारंग–अदारंग द्वारा रचित ख्याल क्यों लोकप्रिय हुए?

4.5 शब्दावली

1. क्रियात्मक – व्यवहारिक / प्रयोगात्मक
2. लिपिबद्ध – स्वरलिपि में लिखित
3. अथक – लगातार
4. राजाश्रय – राजकृपा
5. वाग्गेयकार – शास्त्र पक्ष व क्रियात्मक पक्ष दोनों का जानकार
6. मींड़ – अटूट ध्वनि में एक स्वर से दूसरे स्वर में जाना। उदाहरण – सा से प तक मींड लेने में बीच के स्वरों का स्पर्श होता है किन्तु अलग से सुनाई नहीं देता।

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

(अ) वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. ख) पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे 2. ग) मुहम्मद शाह रंगीले
3. क) फिरोज खॉ 4. ख) पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर

(ब) रिक्त स्थानों की पूर्ति :

1. दस 2. पं0 वी0एन0 भातखण्डे 3. दिगम्बर गोपाल
4. पं0 बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर 5. पुत्र

4.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रीवास्तव, श्री हरीश चन्द्र, राग परिचय (भाग एक से पॉच), संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. गोवर्धन, श्रीमती शान्ति, संगीत शास्त्र दर्पण।
3. वसन्त, संगीत विशारद, संगीत कार्यालय, हाथरस।
4. साभार गूगल।

4.8 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. *संगीत* मासिक पत्रिका, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. चौधरी, डा0 सुभाष रानी, *संगीत के प्रमुख शास्त्रीय सिद्धान्त,* कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
3. बंसल, डॉ0 परमानन्द, *संगीत सागरिका,* प्रासंगिक पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पं0 भातखण्डे जी अथवा पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी का जीवन परिचय व सांगीतिक योगदान के बारे में लिखिए।
2. सदारंग–अदारंग का जीवन परिचय दीजिए।

इकाई 5– भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति का परिचय; राग यमन का परिचय एवं छोटा ख्याल/रजाखानी गत को तानों/तोड़ों सहित लिपिबद्ध करना ।

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति
5.4 राग यमन का परिचय
5.4.1 राग यमन में छोटा ख्याल व तानों को लिपिबद्ध करना
5.4.2 राग यमन में रजाखानी गत व तोड़ों को लिपिबद्ध करना
5.5 सारांश
5.6 शब्दावली
5.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.8 संदर्भ ग्रंथ सूची
5.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
5.10 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (बी0ए0एम0एम0(एन)–120) के प्रथम सेमेस्टर के प्रथम खण्ड की पंचम इकाई है। इससे पहले की इकाइयों के अध्ययन के बाद आप भारतीय संगीत के वाद्य यंत्रों के वर्गीकरण के विषय में तथा देश के प्रख्यात तंत्र वाद्यकारों उस्ताद इनायत खॉ, उस्ताद अली अकबर खॉ व पं0 शिवकुमार शर्मा के जीवन परिचय एवं उनके योगदान के बारे में ज्ञान प्राप्त कर चुके होंगे।

इस इकाई में भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति का वर्णन किया गया है। प्रस्तुत इकाई में मसीतखानी गत, रजाखानी गत व तोड़ों को इस पद्धति में लिपिबद्ध करना भी सविस्तार समझाया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप स्वरलिपि पद्धति के महत्व को समझ सकेंगे तथा वर्तमान शिक्षण प्रणाली इसके द्वारा जिस प्रकार सुविधाजनक हो गई है वह भी जान सकेंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप विभिन्न रागों के स्वरूप एवं गतों को स्वरलिपिबद्ध कर लिखित रूप में उसका ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :

- भारतीय संगीत के स्वरों, वर्णों, अलंकारों तथा राग रचनाओं के विभिन्न स्वरूपों को स्वरलिपि पद्धति में लिख पाऐंगे।
- आवश्यकता होने पर स्वरलिपि को पढ़ व समझ कर पुनः प्रस्तुति करने में सक्षम हो सकेंगे।
- स्वरों के विभिन्न स्वरूपों–शुद्ध, कोमल व तीव्र को सहज रूप में लिख कर प्रदर्शित कर सकेंगे।
- संगीत के विभिन्न सप्तकों को चिन्हित कर सकेंगे।
- संगीत के वर्णों–स्थायी, आरोही, अवरोही व संचारी को स्वरलिपि के माध्यम से भली–भॉति समझ सकेंगे।
- संगीत की राग रचनाओं, गतों के प्रकारों को स्वरलिपि में लिख सकेंगे तथा बार–बार पढ़ कर कंठस्थ कर सकेंगे, जिससे प्रस्तुतीकरण में सहजता प्राप्त होगी।
- स्वरलिपि के साथ हीताललिपि का भी ज्ञान आपको प्राप्त होगा। जिससे राग रचना अथवा गतों को विभिन्न भारतीय तालों में लिख सकेंगे तथा अपने वाद्य में सहजता से लय–ताल में प्रस्तुति देने में सफल हो सकेंगे।

5.3 भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति

भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति सरल व स्पष्ट होने के कारण भारत में अत्यधिक लोकप्रिय है। इसमें संकेत–चिह्नों की अधिकता नहीं है। आप अल्प समय में ही इसको समझ कर प्रयोग में ला पाऐंगे। इस स्वरलिपि के माध्यम से बंदिश (राग रचना), स्वर के स्वरूपों के साथ ही लय, ताल, मात्रा, काल का निरूपण एक सरल से चार्ट में किया जाता है। जिसका अवलोकन करने से संगीत के विद्यार्थी थोडे अभ्यास से स्वर, लय व ताल में उस राग रचना को प्रस्तुत कर पाने में सक्षम होते हैं। भारतीय संगीत सीखने वाले विदेशी विद्यार्थी भी इसी संगीत लिपि का प्रयोग इसके रोमन संस्करण के माध्यम से करते हैं।

भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति में स्वरों के शुद्ध स्वरूपों, मध्यलय अथवा बराबर की लय के लिए किसी चिन्ह का प्रयोग नहीं होता।

- **शुद्ध स्वर** – *सा, रे, ग, म, प, ध, नि*
- **विकृत स्वर** – कोमल स्वर के लिए पड़ी रेखा (–) तथा तीव्र स्वर के लिए खड़ी रेखा (।) का चिह्न रहता है।
- **कोमल स्वर** – *रे̱, ग̱, ध̱, नि̱*
- **तीव्र स्वर** – *म॑*

मध्य सप्तक के लिए कोई चिह्न नहीं होता, जबकि मंद्र सप्तक के लिए स्वरों के नीचे बिन्दु तथा तार सप्तक के लिए स्वरों के उपर बिन्दु लगाया जाता है। इसे आप निम्न प्रकार से समझ पाऐंगे।

मंद्र सप्तक	मध्य सप्तक	तार सप्तक
सा़ रे़ ग़ म़ प़ ध़ नि़	सा रे ग म प ध नि	सां रें गं मं पं धं निं

इसमें मध्य सप्तक के सा स्वर को आधार मान कर बायीं ओर के स्वर नीचे तथा दायीं ओर के स्वर क्रमशः ऊँचे होते जाऐंगे।

भातखण्डे संगीत लिपि में स्वरों को विभिन्न मात्रा काल में दर्शाने की सरल विधि को आप निम्न प्रकार से समझ लेंगे।

स – – – → (इसमें **सा** स्वर चार मात्रा का है)
स – → (इसमें **सा** स्वर दो मात्रा का है)
स → (इसमें **सा** स्वर एक मात्रा का है)
सरे → (इसमें **सा** आधी मात्रा तथा रे आधी मात्रा का है)
सारेगम → (इसमें चारों स्वर चौथाई मात्रा के हैं)
सारेगमपधनिसां → (इसमें आठों स्वर 1/8 मात्रा के हैं)

भातखण्डे स्वरलिपि में गायन–वादन की मीड़, कण, खटका तथा लयकारी की क्रिया को आप निम्न चिह्नों के माध्यम से समझ सकेंगे।

- **मींड़** – एक स्वर से दूसरे स्वर में ध्वनि– मगरे –स्वरों के उपर अर्द्धचंद्र को तोड़े बिना पहुंचना।
- **कण** – मुख्य स्वर में दूसरे स्वर का स्पर्श – ^{ग}म – मुख्य स्वर के ऊपर बांयी ओर दूसरे स्वर को लिखना
- **खटका** :–
  चार स्वरों को शीघ्र झटके से कहना, इसमें जिस स्वर का खटका हो उससे अगला स्वर फिर मुख्य स्वर फिर पिछला स्वर फिर मुख्य – (म) – मुख्य स्वर में खटका के प्रयोग हेतु पहले प, फिर म, फिर ग पुनः म ; म स्वर को ब्रैकट में रखने से यह क्रिया

स्वर शीघ्रता से प्रयोग में आता है।	स्पष्ट हो गई।

- <u>लयकारी</u> *(दुगुन, तिगुन, चौगुन)* – स्वरों के नीचे अर्द्धचंद्र – <u>सारे</u> (दुगुन), <u>सारेग</u> (तिगुन), <u>सारेगम</u> (चौगुन)

<u>भातखण्डे स्वरलिपि तथाताललिपि का संयोजन</u> – यह संयोजन सरल विधि से होता है। यह आप नीचे दिए गए उदाहरण से समझ पाऐंगे।

उदाहरण 1)	राग	–	*भूपाली*
	वर्जित स्वर	–	*म तथा नि*
	आरोह	–	*सा रे ग प ध सां*
	अवरोह	–	*सां ध प ग रे सा*
	पकड़	–	*ग रे सा ध़ सा रे ग, प ग, ध प ग रे सा*
	स्थाई	–	गाइये गणपति जग बंदन शंकर सुवन भवानी नंदन
	अन्तरा	–	सिद्ध सदन गज–वदन विनायक कृपा सिधु सुंदर लायक

राग भूपाली की इस बंदिश का प्रयोग स्वरवाद्य वायलिन, सांरगी तथा बॉसुरी में भी किया जाता है। मध्य लय की इस बंदिश को तीनताल में स्वर लिपि के साथ इस प्रकार लिखा जाएगाः–

<u>स्थाई</u>

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
								सं	–	ध	प	ग	रे	सा	रे
								गा	ऽ	इ	ये	ग	ण	प	ति
ग	ग	प	–	ग	ग	–	–	ग	–	ग	रे	ग	प	ध	सां
ज	ग	बं	ऽ	द	न	ऽ	ऽ	शं	ऽ	क	र	सु	व	न	भ
ध	सा	सां	–	ध	सां	ध	प								
वा	ऽ	नी	ऽ	नं	ऽ	द	न								
X				2				0				3			

<u>अन्तरा</u>

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
								ग	–	प	ध	सां	सां	सां	सां
								सि	ऽ	द्धि	स	द	न	ग	ज
सां	रें	गं	रे	सां	–	रें	सां								
व	द	न	वि	ना	ऽ	य	क								
								ध	सां	–	ध	–	ध	प	–
								कृ	पा	ऽ	सिं	ऽ	धु	सुं	ऽ
ध	सां	ध	परे	–	सा	सा									
द	र	स	ब	ला	ऽ	य	क								
X				2				0				3			

उपरोक्त सारणी को देखकर आपको यह स्पष्ट हो जायेगा कि बंदिश नौवी मात्रा से गाई जाएगी या बजाई जाएगी। हर विभाग में चार–चार मात्रा है। किसी स्वर को दो मात्रा तक गाने के लिए – (डैश) का प्रयोग किया गया है। मध्य एवं तार सप्तक के स्वरों का प्रयोग किया गया है। बंदिश, स्वरलिपि तथा काललिपि सभी का संयोजन अति सरल वैज्ञानिक विधि से हो गया।

अभ्यास प्रश्न

अ) सत्य / असत्य बताइए :

1. भातखण्डे स्वरलिपि में तार सप्तक के स्वरों के नीचे बिन्दु लगाते हैं।
2. भातखण्डे स्वरलिपि में मीड़ के लिए दो स्वरों के उपर अर्द्धचंद्र बनाते हैं।
3. भातखण्डे स्वरलिपि में तीव्र स्वर के लिए स्वर के नीचे पड़ी रेखा (–) चिह्न का प्रयोग होता है।
4. भातखण्डे स्वरलिपि में मध्य सप्तक के स्वरों के लिए कोई चिह्न नहीं है।

ब) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति को संक्षेप में समझाइए।

5.4 राग यमन का परिचय

राग यमन भारतीय संगीत का प्रारम्भिक परन्तु अत्यन्त महत्वपूर्ण राग है। इसको कल्याण तथा ईमन आदि नामों से भी जाना जाता है। इसमें मध्यम स्वर तीव्र **(म')** तथा अन्य सभी स्वर शुद्ध प्रयोग किए जाते हैं। यह एक **सम्पूर्ण जाति** का राग है क्योंकि इसमें आरोह–अवरोह में सातों स्वरों का प्रयोग होता है। इसका वादी स्वर गन्धार(ग) तथा सम्वादी निषाद(नि) है। यह **पूर्वांगवादी राग** है। **रात्रि के प्रथम प्रहर** में यह राग गाया बजाया जाता है। यह कल्याण थाट से उपजा उसका आश्रय राग भी है। इस राग की अन्य मुख्य विशेषताएं निम्न हैं:–

आरोह – *नि़ रे ग म" प ध नि सां*
अवरोह – *सां नि ध प म" ग रे सा*
पकड़ – *नि़ रे ग रे, सा, प म" ग, रे, सा*
न्यास स्वर – *सा, रे, ग, प तथा नि*

यह गम्भीर प्रकृति का अत्यन्त प्रचलित राग है। गायन में ध्रुपद, बडा ख्याल, छोटा खयाल तथा वादन में मसीतखानी व रजाखानी गतें भी इसमें बजाई जाती है। सितार, सरोद, वायलिन व बॉसुरी वादकों का भी यह प्रिय राग है। भारतीय संगीत में राग यमन की साधना विशेष रूप से की जाती है। इस राग का चलन निम्न प्रकार होता है।

- सा – – – , नि़ रे ग रे, ग – – –, नि़ रे ग म" प – रे – ग – – –,
  ग – रे –, नि़ ध़ नि़ – रे – , सा – – –
- सा – – – , नि़ ध़ नि़ ध़ प़ – – –, म़" ध़ नि़ ध़ प़ , नि़ ध़ नि़ – रे – , सा – – –
- ग म" ध, नि – – –, म" ध , नि – – – , ध़ – नि – नि, सां – – – नि ध
  नि रें, गं – – – , रें – गं– , रें – नि रें, सां – – –
- सां – – – , नि ध नि ध , प – – – , प म" – रे ग , ग – रे – नि़ ध़ नि़
  रे – – , ग – सा

उपरोक्त स्वर विस्तार से आपको ज्ञात होगा कि इस राग का विस्तार मध्य, मंद्र व तार तीनों सप्तकों में होता है।

5.4.1 राग यमन में छोटा ख्याल व तानों को लिपिबद्ध करना

राग यमन – मध्यलय ख्याल (तीनताल)

स्थाई – ऐरी आली पिया बिन सखी कलना परत मोहे घरी पल जिन दिन
अन्तरा – जब तें पिया परदेस गवन कीनो रतियाँ कटत मोहे तारे गिन गिन

स्थाई

														प	गमं
														अ	रीऽ
नि	ध	प	–	–	रे	–	सा	ग	रे	ग	ग	–	–	प	प
ए	ऽ	री	ऽ	ऽ	आ	ऽ	ली	पि	या	बि	न	ऽ	ऽ	स	खि
0				3				x				2			
ग	मं	ग	प	प	ध	प	प	नि	ध	प	प	रे	रे	सा	सा
क	ल	ना	प	र	त	मो	हे	घ	री	प	ल	जि	न	दि	न
0				3				x				2			

अन्तरा

प	प	सां	सां	सां	–	सां	सां	सां	(सां)	नि	ध	नि	ध	प	प
ज	ब	तें	पि	या	ऽ	प	र	दे	ऽ	स	ग	व	न	की	नो
0				3				x				2			
प	गं	रें	सां	नि	ध	प	प	ध	नि	ध	प	रे	रे	सा	सा
र	ति	यॉं	क	ट	त	मो	हे	ता	ऽ	ऽ	रे	गि	न	गि	न
0				3				x				2			

तानें :

1 – आठवी मात्रा से प्रारम्भ तथा मुखडे पर मिलना :

ग ग रे ग | म"म" म"म" ध ध म" ध सां सां नि सां रें गं सां रें |
2

नि सां ध नि | प ध प म" ग रे सा– मुखडा |
0

2 – सम से सम तक :

नि़ रे ग रे ग रे नि़ रे ग म" प म प म" ग म" |
X

म" ध नि ध नि ध म" ध नि रें गं रें गं रें सां – |
2

नि नि ध प ग रे नि़ रे ग – << नि नि ध प |
0

ग रे नि़ सा ग – << नि नि ध प ग रे नि़ रे | ग ग ग
3 X

3 – सम से सम तक :

नि़ रे ग रे प म" ग रे ग म" प ध नि ध प म" |
X

म" ध नि रें गं रें गं रें सां नि ध प म" ग रे सा |
2

नि़ रे ग म" प म" ग रे ग – << नि़ रे ग म" |
0

प म" ग रे ग – << नि़ रे ग म" प म" ग रे | ग ग ग
3 X

5.4.2 राग यमन में रजाखानी गत व तोडों को लिपिबद्ध करना :

स्थाई

ग	म"म"	प	रे	–	सासा	नि़	रे	ग	–	ग	रे	ग	म"म"	प	–
दा	दिर	दा	रा	ऽ	दिर	दा	रा	दा	ऽ	दा	रा	दा	दिर	दा	ऽ
म"	धध	नि	सां	–	निनि	ध	प	ग	म"म"	पप	म"म"	ग–	गरे	–रे	सा–
दा	दिर	दा	रा	ऽ	दिर	दा	रा	दा	दिर	दिर	दिर	दाऽ	रदा	ऽर	दाऽ
0				3				X				2			

अन्तरा

म"	गग	म"	प	–	निनि	ध	नि	सां	–	सां	सां	नि	रेंरें	सां	–
दा	दिर	दा	रा	–	दिर	दा	रा	दा	–	दा	रा	दा	दिर	दा	–
नि	रेंरें	गं	सां	–	निनि	ध	प	ग	म"म"	पप	म"म"	ग–	गरे	–रे	सा–
दा	दिर	दा	रा	ऽ	दिर	दा	रा	दा	दिर	दिर	दिर	दाऽ	रदा	ऽर	दाऽ
0				3				X					2		

तोड़े :

अ) स्थाई के तोड़े :

1. गरे गम" पध पम" गम" पम" गरे सा–
   X
2. गम" धनि सांनि धप निध पम" गरे सा–
   X
3. पम" गम" पध पम" गम" पम" गरे सा–
   X

ब) अन्तरे के तोड़े :

1. सांनि धप निध पम" गम" पध निरें सां–
   X
2. सांनि धनि सांरें सांनि धप गम" पध निसां
   X
3. निरें गंरे सांनि धप म"ग म"ध निरें सां–
   X

रजाखानी गत के तोड़े सम से सम तक

1.

गग X	रे ग	रेसा	नि़सा	पप	म"प	म"ग	रेग	
निनि 2	धनि	धप	म"प	गम"	पम"	गरे	सा–	
गग 0	रेग	रेसा	नि़रे	ग–	<<	गग	रेग	
रेसा 3	नि़रे	ग–	<<	गग	रेग	नि़ध	नि़रे	| ग X

2.

गरे X	गरे	नि़ध़	नि़रे	पम"	पम"	गरे	गम"	
निध 2	निध	म"ध	निसां	निध	पम	गरे	सा–	
गरे 0	गरे	नि़ध	नि़रे	ग–	<<	गरे	गरे	
नि़ध 3	नि़रे	ग–	<<	गरे	गरे	नि़ध	नि़रे	| ग X

अभ्यास प्रश्न

अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति करें :

1. राग यमन का वादी स्वर ––––––– है।
2. राग यमन का गायन समय –––––––– है।
3. राग यमन की पकड़ ––––––––– है।
4. राग यमन का थाट –––––––––– है।

ब) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. राग यमन का परिचय दीजिए।

5.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे की ''भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति'' के माध्यम से भारतीय रागों की रचनाओं(मसीतखानी व रजाखानी गतों) को स्वरलिपि तथा काललिपि के द्वारा पूर्ण रूप से लिपिबद्ध करने तथा भविष्य के लिए सुरक्षित रखने में स्वयं को योग्य पाऐंगे। आप यह भी जान गए होंगे कि बिना सीखे, इस पद्धति में लिपिबद्ध रचनाओं(मसीतखानी व रजाखानी गतों) को किस तरह समझ कर बजाया जा सकता है।

5.6 शब्दावली

1) **विकृत स्वर** – स्वरों का अपनी स्थिति से नीचा होना कोमल तथा ऊंचा होना तीव्र कहलाता है। इन्हें विकृत स्वर कहा जाता है।

2) **सप्तक** – सात स्वरों के क्रमानुसार समूह को सप्तक कहते हैं।

3) **मींड़** – एक स्वर से किसी अन्य स्वर में ध्वनि को तोडे बिना गाना/बजाना मीड़ कहलाता है। जैसे – म ग रे

4) **गत** – तंत्री वाद्यों में बजने वाली राग रचनाएं गत कहलाती हैं।
5) **कण** – किसी स्वर को समीप वाले स्वर से स्पर्श कर गाना अथवा बजाना।
6) **लयकारी** – गायन/वादन की सामान्य क्रिया को दुगुन, तिगुन व चौगुन में प्रस्तुत करना लयकारी कहलाता है।
7) **मसीतखानी गत** – वाद्य यंत्रों में बजने वाली विलम्बित गत, जिसे सितार वादक मसीत खॉ द्वारा प्रचलित किया गया, मसीतखानी गत कहलाती है।
8) **रजाखानी गत** – वाद्य यंत्रों में बजने वाली रागों की मध्य/द्रुत रचनाएं जिन्हें सितार वादक रजाखान द्वारा प्रचलित किया गया, रजाखानी गत कहलाती हैं।
9) **उत्तरांगवादी** – जिस राग का वादी स्वर, सप्तक के उत्तरी भाग–*म प ध नी सां* में हो, वह उत्तरांगवादी कहलाता है। ऐसे राग मध्य व तार सप्तक में अधिक प्रभावी होते हैं।

5.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

5.3 की उत्तरमाला :–

1. असत्य 2. सत्य 3. असत्य 4. सत्य

5.4 की उत्तरमाला :–

1. गांधार है 2. रात्रि का प्रथम प्रहर है।

5.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भातखण्डे, पं0 विष्णुनारायण, *हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति–क्रमिक पुस्तक मालिका भाग–2,* संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. देवांगन, श्री तुलसी राम, *बेला वादन शिक्षा,* संगीत प्रेस, 88 साउथ मलाका, इलाहाबाद।
3. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, *राग परिचय भाग – 1,* संगीत सदन प्रकाशन, साउथ मालाका, इलाहाबाद।
4. चौबे, डा0 सुशील कुमार, *हमारा आधुनिक संगीत,* उ0प्र0 हिन्दी संस्थान, लखनऊ।

1.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. वसन्त, *संगीत विशारद,* संगीत कार्यालय, हाथरस (उ0 प्र0)।
2. *संगीत* मासिक पत्रिका, संगीत कार्यालय, हाथरस (उ0 प्र0)।

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति को विस्तार से समझाइए।
2. राग यमन का पूर्ण परिचय आलाप, छोटा ख्याल, रजाखानी गत एवं तोडों के साथ दीजिए।

इकाई 6– भातखण्डे താललिपि पद्धति का परिचय; तीनताल के ठेके एवं उसको दुगुन लयकारी सहित लिपिबद्ध करना।

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 താललिपि पद्धति
6.3.1 भातखण्डे താललिपि पद्धति
6.3.2 ताल से सम्बन्धित मुख्य पारिभाषिक शब्द
6.4 तालों का परिचय एवं स्वरूप
6.4.1 तीनताल का सम्पूर्ण परिचय
6.5 तालों की लयकारियाँ
6.5.1 तीनताल की लयकारियाँ
6.6 सारांश
6.7 शब्दावली
6.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
6.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
6.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
6.11 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (बी0ए0एम0एम0(एन)–120) के प्रथम सेमेस्टर के प्रथम खण्ड की षष्टम इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के पश्चात आप बता सकते हैं कि स्वरलिपि पद्धति द्वारा संगीत जैसे प्रायोगिक विषय को भी लिखित रूप में किस तरह सर्वसुलभ बना दिया गया है।

प्रस्तुत इकाई में भातखण्डे जी द्वारा निर्मित താललिपि पद्धति का पूर्ण परिचय देते हुए पाठ्यक्रम की तालों को उदाहरण स्वरूप लिपिबद्ध भी किया गया है। साथ ही तालों की लयकारियाँ भी प्रस्तुत की गई हैं।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप താललिपि पद्धति के महत्व को समझ सकेंगे। हिन्दुस्तानी संगीत से सम्बन्धित तालों के विभिन्न तत्वों को भी जान सकेंगे। गीत रचनाओं में तालों के प्रयोग एवं उन्हें लिपिबद्ध करने की पद्धति को भी आप समझ सकेंगे।

6.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप :–

- बता सकेंगे कि താललिपि पद्धति द्वारा किस प्रकार ताल का क्रियात्मक स्वरुप प्रस्तुत किया जा सकता है।
- ताल सम्बन्धी समस्त तत्वों को समझते हुए उनके प्रयोग सम्बन्धी नियमों को भी जान सकेंगे।
- ताल के लयकारी सम्बन्धी पक्ष को समझते हुए संगीत में इनका प्रयोग कर सकेंगे।

6.3 ताललिपि पद्धति

विद्वान संगीतज्ञों का कथन है कि स्वर तथा लय संगीत कला के दो पैर हैं तथा एक के न होने से वह लँगड़ी रहती है। सम्पूर्ण जगत का आधार मात्र 'लय' है। यदि लय का क्रम क्षण मात्र भी अपने स्थान से हट जाए तो प्रलय का रूप धारण करने में तनिक भी देर नहीं लगेगी। प्रत्येक गति में एक लय है। प्रत्येक जीव के उत्पन्न होते ही उसमें एक काल का सम्मिश्रण हो जाता है तथा यही काल अथवा समय जब निरन्तर बराबर चलता है तो उसी को लय कह देते हैं। संगीत में स्वर की उत्पत्ति के साथ उसे बाँधने हेतु काल की उत्पत्ति हो जाती है। लय ही स्वर को अपने बन्धन में बांधकर उसे परिमार्जित कर देती है। लय के द्वारा ही स्वर में बल एवं माधुर्य उत्पन्न हो जाता है। विभिन्न लयों में बंधकर स्वर सौन्दर्य अत्यधिक बढ़ जाता है। लय से ही संगीत में रंजकता आती है। गायन, वादन एवं नृत्य तीनों विधाओं में लय का विशेष महत्व है। बिना लय के संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। गायक या वादक स्वरों के माध्यम से कभी विलम्बित लय में, कभी मध्य लय में तथा कभी द्रुत लय में अपनी कला का प्रस्तुतिकरण करता है या कह सकते है कि अपने मन के भावों को श्रोताओं तक पहुँचाता है।

लय को ही एक निश्चित चक्र में बाँधने से तालों की उत्पत्ति होती है। वास्तव में अगर केवल लय ही चलती रहेगी तो सम्भवतः उसके चलने से श्रोता ऊब जाएँ, अतः लय को संगीतपयोगी एवं रजंक बनाने के लिए एक निश्चित क्रम में बाँध देते हैं। उसी निश्चित क्रम को ताल की संज्ञा दी जाती है। लय का क्रम आलाप गायन में भी रहता है परन्तु उसमें निश्चित मात्रा क्रम नहीं रहता है। जब प्रारम्भिक आलाप के पश्चात बंदिश या गीत गाते हैं वहीं से लय का क्रम प्रारम्भ होता है तथा साथ में तबले में इस निश्चित क्रम से सम्बन्धित ताल बजायी जाती है। जिस प्रकार बंदिशों को स्वरलिपि पद्धति में लिखित रूप में सुरक्षित रखा जाता है उसी प्रकार तालों को लिखने के लिए ताललिपि पद्धति का प्रयोग किया जाता है।

भारतीय संगीत में ताल का स्थान महत्वपूर्ण है। जिस गायक या वादक को ताल का ज्ञान न हो वह गायक–वादक कहलाने योग्य नहीं है। संगीत में जो समय का निर्धारण होता है वहीं नापने का साधन ताल है। लय को नींव प्रदान करने का कार्य ताल का ही है। स्वर को उत्पन्न करना, उसे गति देना, इसके पश्चात उचित समय पर उसमें ठहराव एवं विस्तार करने से ही राग में रंजकता उत्पन्न होती है। परन्तु राग जैसी महान रचना को बन्धन में बाधना एक कठिन कार्य है। इसके लिए लय, मात्रा, काल आदि का प्रयोग होता है तथा इसका आधार ताल ही है। ताल हमारे भारतीय संगीत की अपनी विशेषता है। पाश्चात्य संगीत में केवल लय दिखाई देती है उनके यहाँ भारतीय तालों के समान किसी प्रकार की व्यवस्था नहीं है।

6.3.1 भातखण्डे ताललिपि पद्धति – शास्त्रीय संगीत में तालों के लिखने हेतु ताललिपि पद्धति का प्रयोग किया जाता है। इसके लिए मुख्य रूप से भातखण्डे ताललिपि पद्धति का प्रचलन है। पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर पद्धति द्वारा भी तालों को लिपिबद्ध करने का प्रचलन है, परन्तु भातखण्डे पद्धति ही मुख्य रूप से प्रयोग में लायी जाती है। भातखण्डे ताललिपि पद्धति सरल एवं सुगम हैं इसीलिए विद्यार्थियों को भी सुविधा रहती है। भातखण्डे ताललिपि पद्धति में ताल चिन्हों का प्रयोग निम्न रूप में किया जाता है। उदाहरण के लिए तीनताल के स्वरूप का विवरण प्रस्तुत किया गया है ।

ताली के लिए – ताली के लिए संख्या जैसे 2, 3, 4 आदि दी जाती है जो कि सम को पहली मानकर होती है।

खाली के लिए – 0

1 2 3 4	5 6 7 8	9 10 11 12	13 14 15 16	
धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा	धा तिं तिं ता	ता धिं धिं धा	धा
X	2	0	3	X

- **<u>सम</u>** – भातखण्डेताललिपि पद्धति में सम के लिए 'X' का चिन्ह लगाया जाता है। सम का अर्थ होता है ताल का आरम्भ। गायन, वादन, नृत्य में सम का सबसे महत्वपूर्ण स्थान होता है। प्रत्येक ताल की पहली मात्रा को सम कहा जाता है। जैसे तीनताल का सम पहली मात्रा पर ही होगा। संगीत के अन्तर्गत सभी विधाओं में सम पर जोर देकर विशेष रूप से सिर हिलाकर सम के स्थान को दर्शाया जाता है। गायक–वादक अपनी प्रस्तुति देते हुए विभिन्न स्वर, लय की क्रियाएँ करते हुए संगतकार के साथ सम पर आकर मिल जाते हैं। सम पर विशेष रूप से ताली होती है, यही पहली मात्रा भी है। ताल का एक निश्चित क्रम होता है। प्रत्येक बार क्रम पूरा होते ही सम आ जाता है, जैसे 10 मात्रा की ताल है तो पहली मात्रा पर सम के बाद क्रम लगातार चलता रहता है तथा प्रत्येक बार अंत में 10 मात्रा के बाद पहली मात्रा पर सम निरन्तर आते रहता है। संगीत में सम एक ऐसा स्थान होता है जिसका आनन्द संगीतकार व श्रोता दोनों लेते हैं।

- **<u>ताली</u>** – भातखण्डे ताललिपि पद्धति में ताली के स्थान पर ताली संख्या द्वारा तालों को लिपिबद्ध किया जाता है। जैसा आप जान चुके हैं कि पहली ताली सम पर होती है। इसके बाद जितनी भी ताली आती हैं उन्हें चिन्हित करने के लिए क्रमशः ताली संख्या 2, 3, 4 का प्रयोग किया जाता है। ताल के निश्चित क्रम में प्रत्येक विभाग में जहाँ पर ताली होती है वहाँ उसकी क्रम संख्या लिख देते हैं। तबले पर भी ताली बजाने के स्थान पर धा, धिं बोल बजाए जाते हैं। उदाहरण के लिए आप पहले तीनताल को जान चुके हैं कि उसमें 1, 5 तथा 13 मात्राओं पर ताली है तथा तालियों की क्रम 2, 3 व 4 द्वारा इन स्थानों को चिन्हित किया गया है। इन स्थानों पर ताली बजाई जाती है तथा तबले पर 'धा' का बोल बजता है। प्रत्येक विभाग के प्रारम्भ में ही ताली का स्थान होता है। इसे 'भरी' नाम से भी उच्चारित किया जाता है।

- **<u>खाली</u>** – भातखण्डे ताललिपि पद्धति में खाली के लिए '0' चिन्ह लगाया जाता है। किसी भी ताल के उस विभाग की पहली मात्रा जहाँ सम, ताली या भरी न हो उसको खाली कहा जाता है। खाली में ताली न लगाकर विशेष रूप से हाथ को उल्टा करके या हवा में इशारे के साथ दर्शाया जाता है। विभिन्न तालों में खाली का स्थान कई जगह हो सकता है। जैसे कि प्रारम्भ में आप तीनताल को जान चुके हैं। इसमें 9वीं मात्रा पर खाली है, वहाँ पर '0' का चिन्ह भी इसीलिए लगाया गया है। अधिकतर यह देखा गया है कि जिन तालों में एक ही खाली स्थान होता है उनमें यह स्थान ज्ञात करने के लिए ताल की कुल मात्राओं का आधा कर उसमें एक जोड़कर जाना जा सकता है, जैसे तीनताल में खाली का स्थान पता लगाना है तो कुल मात्रा 16 की आधा 8 में 1 जोड़कर 8+1=9 खाली का स्थान 9 पर ज्ञात हो जाएगा। खाली का स्थान तालों में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि सम जो सबसे सौन्दर्यपूर्ण स्थान है उसका पता हमें खाली के द्वारा ही पता चलता है। सम आने से पहले खाली के द्वारा हमें मात्राओं का पता चलता है, जैसे गायक कौन सी मात्रा पर है तथा सम कितनी मात्रा बाद आ जाएगा इत्यादि। खाली का स्थान, साधारणतः सम अर्थात ताल की पहली मात्रा को छोड़कर अन्य विभागों के प्रारम्भ में होता है। विभिन्न तालों में खाली के स्थान कई हो सकते हैं।
- **<u>विभाग</u>** – भातखण्डे ताललिपि पद्धति में विभाग को एक सीधी रेखा '।' से चिन्हित किया जाता है। सभी तालें विभिन्न विभागों में बँटी रहती हैं। जिस प्रकार सभी तालों की निश्चित मात्राएँ होती हैं उसी प्रकार तालों के निश्चित विभाग भी होते हैं। अधिकतर विभागों की संख्या 2 से लेकर 5 या 6 तक हो सकती है। जितनी बार ताली एवं खाली का स्थान ताल में होगा उतनी बार विभाग को भी स्थान मिलेगा अर्थात ताली–खाली पर विभागों की संख्या निर्भर है। जैसे तीनताल में 1, 5, 13 पर ताली तथा 9 पर खाली है तो इस प्रकार 4 विभाग होंगे। हमारे संगीत में कुछ ऐसी भी तालें हैं जिनमें विभागों की संख्या बहुत अधिक है तथा प्रत्येक मात्रा में एक विभाग होता है। जैसे कुंभ और रूद्र तालें, इन तालों में प्रत्येक मात्रा एक विभाग का स्थान लिए है। विभागों से ताल में एक खाँचा बना रहता है तथा गायक–वादक को ताल का ज्ञान स्पष्ट रूप से हो जाता है।

6.3.2 ताल से सम्बन्धित मुख्य पारिभाषिक शब्दः

- **आवर्तन** – किसी भी ताल का अपना एक निश्चित क्रम होता है। ताल जितनी मात्रा की होती है उतनी मात्रा पूर्ण होने के बाद पुनः उसी क्रम में चलती रहती है। इसे ताल का एक चक्र कहा जाता है तथा इसी चक्र का नाम आवर्तन है। इसी प्रकार गीत रचना के एक पूरे चक्र को आवर्तन कहते हैं। अर्थात पहली मात्रा से वापस पूरे चक्र के पश्चात जब पुनः पहली मात्रा पर जाते हैं तब उसे एक आवर्तन कहते हैं। आवर्तन एवं सम में यह अन्तर है कि सम पहली मात्रा में होता है तथा सम से पुनः सम तक आने को आवर्तन कहा जाता है।

- **मात्रा** – संगीत में समय नापने के लिए जिस इकाई का प्रयोग किया जाता है उसे मात्रा कहते हैं। मात्राओं के आधार पर तालों की रचना होती है। प्रत्येक ताल अपनी निश्चित मात्रा एवं बोलों के आधार पर पहचानी जाती है। जैसे– तीनताल में 16 मात्राएँ व एकताल में 12 मात्राएँ होती हैं। मात्राओं के आधार पर विभिन्न लयकारियाँ की जाती हैं। गीत रचनाओं में विशेष रूप से मात्राओं के आधार पर पता चलता है कि कौन सी रचना किस मात्रा से प्रारम्भ है तथा किस मात्रा में सम तथा खाली है। बंदिशों का आरम्भ भी अलग–अलग मात्राओं से होता है।

गीत रचनाओं एवं बंदिश के विषय में आप जान चुके हैं कि राग की वह शब्द रचना जो विभिन्न तालों में निबद्ध होती है, बंदिश कहलाती है। ताल पक्ष से सम्बन्धित वाद्यों पर बजने वाली बदिंशों के विषय में भी यहाँ बताना आवश्यक है। वाद्यों पर बजने वाली स्वर एवं तालबद्ध रचनाओं को 'गत' कहा जाता है। गत कई प्रकार की होती हैं। गतें विलम्बित एवं मध्य लय में बजायी जाती हैं। इनमें लयकारियाँ भी की जाती है। एक गत में पाँच मात्रा के मुखड़े लेने का भी चलन है। यह गतों की ताल पक्ष सम्बन्धी कुछ जानकारी थी।

- **ठेका** – यह शब्द ताल वाद्यों का सबसे मौलिक तथा महत्वपूर्ण शब्द है। ठेका, वर्णों या बोलों की वह बंदिश है जो विशिष्ट संख्या, बोल तथा विभाग वाली मात्राओं में निबद्ध होती है। मात्राओं की संख्या, बोलों एवं विभागों के अनुसार प्रत्येक ताल का स्वरूप भिन्न होता है। उदाहरण के लिए चारताल एवं एकताल की मात्राएँ एवं विभाग एक से हैं परन्तु बोलों की दृष्टि से इनमें भिन्नता है। आप पहले जान चुके हैं कि बोलों, मात्राओं, विभागों आदि के आधार पर प्रत्येक ताल भिन्न–भिन्न होती है। साथ ही एक भिन्नता और भी है जो जानना आवश्यक है। कुछ तालों के बोलों में खुलापन होता है जिन्हें खुले एवं दमदार बोलों की तालों के अन्तर्गत रखा जाता है। इस प्रकार की तालों को पखावज पर बजाया जाता है, जैसे – चारताल, सूलताल आदि। अन्य तालें तबले पर बजाई जाती है। पखावज एवं मृदंग पर बजने वाली तालें *'थपिया बाज'* के नाम से जानी जाती है। 'थपिया बाज' का अर्थ ही खुले बोल का बाज है। ठेका चक्राकार घूमता रहता है। ठेके सम्बन्धी अन्य तत्व जैसे सम, ताली खाली आदि के विषय में आप पहले ही जान चुके है। ठेका 'सम' की धुरी पर घूमता रहता है। इस प्रकार सम्पूर्ण ताल के स्वरूप को सांगीतिक भाषा में ठेका कहा जाता है।

- **बोल** – तबले, पखावज एवं ताल वाद्यों में जो वर्ण या अक्षर बजाए जाते हैं उन्हें ही बोल कहा जाता है। बोलों से तालों का स्वरूप स्पष्ट रूप से पता चलता है। हमारे पुराने विद्वान तबला वादकों द्वारा ही प्रत्येक ताल के बोलों का निर्माण किया गया है। अनेक तालों के बोलों में कुछ विभिन्नताएँ भी नजर आती हैं परन्तु प्रचलित सभी तालों का स्वरूप लगभग सभी जगह एक सा है। बोलों में थोड़ा बहुत अन्तर होने के बाद भी सभी तालों का स्वरूप एक जैसा है। तीनताल के बोल उदाहरण के लिए आप जान चुके हैं। तीनताल में जो धा धिं धि धा .... आदि वर्ण या शब्द हैं, इन्हीं को बोल कहा जाता है।

अभ्यास प्रश्न

---

1) लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) काललिपि पद्धति में सम का महत्व बताइए।
(ii) खाली के विषय में आप क्या जानते हैं? बताइए।

2) एक शब्द में उत्तर दीजिए :
(i) खाली के लिए कौन सा चिन्ह प्रयोग होता है?
(ii) ताल की पहली मात्रा पर क्या होता है?
(iii) विभाग के लिए कौन सा चिन्ह प्रयोग किया जाता हैं?

3) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :
(क) लय को निश्चित मात्राओं में बाँधने पर ....की उत्पत्ति होती है।
(ख) ताल का एक चक्र....................कहा जाता है
(ग) ताली के स्थानों को चिन्हित करने के लिए ताली संख्या..............का प्रयोग किया जाता है।

6.4 तालों का परिचय एवं स्वरूप

भारतीय शास्त्रीय संगीत में प्रमुख रुप से तालों में तीनताल, एकताल, चारताल, झपताल, धमारताल, तिलवाड़ा ताल एवं रूपक ताल का प्रयोग होता है। तीनताल एवं एकताल ख्याल गायन में सबसे प्रमुख तथा चारताल ध्रुपद गायन की सबसे प्रमुख ताल है। आप ताल सम्बन्धी सम्पूर्ण तत्वों का अध्ययन कर चुके हैं। अब आप पाठ्यक्रम से सम्बन्धित कुछ तालों की विस्तृत जानकारी प्राप्त करेंगे।

6.4.1 तीनताल का सम्पूर्ण परिचय :

मात्रा – *16*, **विभाग** – *4*, **ताली** – *1, 5 व 13* पर तथा **खाली** – *9* पर

ठेका

धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा	धा तिं तिं ता	ता धिं धिं धा	धा
X	2	0	3	X

परिचय – तीनताल में 16 मात्राएँ होती हैं। यह 16 मात्राएँ 4 विभागों में बटी रहती हैं। चारों विभाग 4–4 मात्राओं के होते हैं। जैसा कि आप सम की परिभाषा जान चुके हैं कि सम हमेशा प्रथम मात्रा पर होता है। तीनताल में सम 'धा' पर है। खाली का स्थान ताल में बीचों–बीच 9वीं मात्रा पर है।

हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत 'तीनताल' बहुत महत्वपूर्ण ताल है। रागों में द्रुत ख्यालों में अधिकतर इसी ताल का प्रयोग होता है। अनेक विलम्बित ख्याल भी तीनताल में गाए जाते हैं। ताल में सम का स्थान प्रथम मात्रा में होता है परन्तु अधिकतर ख्याल गायन की बंदिशों का प्रारम्भ खाली से होता है इसलिए आवश्यक नहीं है कि बंदिश की पहली मात्रा पर भी सम ही होगा। कई विद्वान इस ताल के बोलों में 'धा' के स्थान पर 'ना' शब्द का प्रयोग भी करते हैं। जैसे – ना धिं धिं ना, ना धिं धिं ना। तबला वादन में भी यह ताल सबसे प्रमुख रूप से बजायी जाती है। अति द्रुत गति के तराना गायन में भी तीनताल विशेष रूप से प्रचलित है।

अभ्यास प्रश्न

1) लघु उत्तरीय प्रश्न :
(i) तीनताल का परिचय दीजिए।
(ii) तीनताल का स्वरूप बताइए।
2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(क) तीनताल में .... मात्रा होती हैं।
(ख) तीनताल में .... ताली होती हैं।

3) एक शब्द में उत्तर दीजिए :
(i) तीनताल में कितने विभाग होते हैं?
(ii) तीनताल में कौन सी मात्रा पर खाली होती हैं?

6.5 तीनताल की लयकारियाँ

यदि कहा जाए कि लय के बिना संगीत संभव नहीं है तो यह कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। समय की समान गति ही लय कहलाती है। लय एवं लयकारी में अन्तर होता है। लय यदि संज्ञा है तो लयकारी क्रिया है। लय और लयकारी दोनों एक–दूसरे पर आश्रित हैं। बिना लय के लयकारी भी सम्भव नहीं है। लय ही लयकारी का आधार है। लय अनेक प्रकार की हो सकती हैं परन्तु बहुत समय पहले से ही संगीत विद्वानों ने मुख्य रूप से इसके तीन प्रकार माने हैं।

1. विलम्बित लय 2. मध्य लय 3. द्रुत लय

इसके अतिरिक्त देखा जाए तो अतिविलम्बित या अति द्रुत लय भी होती है परन्तु मुख्य रूप से क्रमशः यह दोनों भी विलम्बित एवं द्रुत के अन्तर्गत आ जाती हैं, इसीलिए इन तीन मुख्य लय प्रकारों को ही सर्वसम्मति से मान्यता प्राप्त है।

अब आप लयकारी को जानेंगे। लयकारी की परिभाषा हम यह दे सकते हैं कि "संगीत में लय के विभिन्न दर्जे करने की क्रिया को लयकारी कहते हैं।" लय के दर्जे करने से तात्पर्य यह है कि कलाकार जब कलात्मक दृष्टि से कभी एक मात्रा में दो, तीन या चार मात्रा तथा कभी दो में तीन, चार में पाँच मात्रा पढ़कर/दिखाकर लय के चमत्कार का प्रदर्शन करता है तो इसी को लयकारी कहते हैं।

लय के समान ही लयकारी के भी विभिन्न प्रकार माने गए हैं परन्तु इसके भी दो मुख्य प्रकार हैं।

एक सीधी लयकारी होती है जिसके अन्तर्गत दुगुन, चौगुन अठगुन आदि आते हैं। दूसरी आड़ की लयकारी होती है जिसके अन्तर्गत तिगुन, आड़, कुआड़ तथा बिआड़ आदि लयकारियाँ आती हैं।

लयकारियों के अन्तर्गत बहुत प्रकार की लयकारियाँ हो सकती हैं परन्तु पाठ्यक्रम के अनुसार आप सीधी लयकारियों को ही जान सकेंगे। विभिन्न तालों में सीधी लयकारी से सम्बन्धित दुगुन, चौगुन को आप जानेंगे। तालों में लयकारी करने से पूर्व आड़ लयकारियों के सम्बन्ध में मात्र एक परिचय जानना आवश्यक सा प्रतीत होता है। सीधी लयकारी के अतिरिक्त अन्य प्रकार की लयकारी को जिसके अन्तर्गत एक मात्रा में डेढ़ मात्रा, तीन मात्रा या सवा मात्रा आदि आते हैं, आड़ की लयकारी कहते हैं। परन्तु व्यापक दृष्टि से वर्तमान में आड़ का व्यापक अर्थ हो चुका है। आड़ का विशेष रूप से यह अर्थ है कि वह लयकारी जिसमें एक मात्रा में डेढ़ या दो मात्रा में तीन मात्रा की लयकारी हो। एक मात्रा में डेढ़ हो या 2 मात्रा में 3 बात एक ही है। इसी प्रकार कुआड़ लयकारी के अन्तर्गत एक मात्रा में सवा मात्रा या 4 मात्रा में 5 मात्रा आती हैं। यह लयकारियाँ कठिन मानी जाती हैं। आप यहाँ तालों में सीधी लयकारी करना जान सकेंगे। तालों के विषय में आप सम्पूर्ण परिचय जान चुके है अब तालों की दुगुन, चौगुन लयकारियाँ जानेंगे।

6.5.1 तीनताल की लयकारियाँ :

ठेका

धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा	धा तिं तिं ता	ता धिं धिं धा	धा

X | 2 | 0 | 3 | X

तीनताल की दुगुनः

धा धिं धिं धा धा धिं धिं धा	धा तिं तिं ता ता धिं धिं धा	
X	2	
धा धिं धिं धा धा धिं धिं धा	धा तिं तिं ता ता धिं धिं धा	धा
0	3	X

दुगुन लयकारी में प्रत्येक दो मात्राओं को एक बना दिया जाता है। जैसा आप पहले जान चुके हैं कि दुगुन लयकारी में एक मात्रा में दो मात्रा बोली जाती हैं। देखा जाए तो दुगुन में ताल दो बार पूरे चक्र के साथ बोली जाती है। दुगुन करते समय मात्राएँ एवं विभागों में कोई परिवर्तन नहीं होता है। मात्र दो बोलों को एक मात्रा मान लिया जाता है जैसा कि आपने तीनताल की दुगुन में देखा। दो मात्रा को एक करने के लिए इसके नीचे अर्द्धचन्द्राकार चिन्ह लगा देते हैं।

दुगुन करने की एक और पद्धति भी होती है जिसे 'एक आवर्तन में दुगुन करना' के नाम से सम्बोधित किया जाता है। आप जान चुके हैं कि पहले जो दुगुन की उसमें ताल का चक्र दो बार अर्थात दो आवर्तन में ताल का प्रयोग किया परन्तु एक आवर्तन में दुगुन करने के लिए मात्रा एवं विभाग तो वैसे ही रहेंगे परन्तु एक विशेष जगह से ताल की दुगुन शुरू की जाएगी तथा ताल की दो बार पुनरावृत्ति नहीं होगी। उदाहरण के लिए आप एक आवर्तन में तीनताल की दुगुन को जानेंगे।

एक आवर्तन में तीनताल की दुगुनः

धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा धा धिं धिं धा	धा तिं तिं ता ता धिं धिं धा	धा
X	2	0	3	X

तीनताल की चौगुन लयकारीः

धाधिंधिंधा धाधिंधिंधा धातिंतिंता ताधिधिंधा	धाधिंधिंधा धाधिंधिंधा धातिंतिंता ताधिधिंधा	
X	2	
धाधिंधिंधा धाधिंधिंधा धातिंतिंता ताधिधिंधा	धाधिंधिंधा धाधिंधिंधा धातिंतिंता ताधिधिंधा	धा
0	3	X

एक आवर्तन में तीनताल की चौगुनः

धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा	
X	2	
धा तिं तिं ता	धाधिंधिंधा धाधिंधिंधा धातिंतिंता ताधिधिंधा	धा
0	3	X

तीनताल की चौगुन 13वीं मात्रा से प्रारम्भ होगी तथा 4 मात्राओं में पूरी चौगुन आ जाएगी। चौथे विभाग की चार मात्राओं में चौगुन पूर्ण रूप में आ जाएगी।

अभ्यास प्रश्न

1) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

(i) लयकारी से आप क्या समझते है?तीनताल को दुगुन लयकारी लिखिए।

2) लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) तीनताल की दुगुन लयकारी लिखिए।

(ii) लयकारी से आप क्या समझते हैं?

3) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) तीनताल की दुगुन किस मात्रा से प्रारम्भ होगी?

(ii) दुगुन लयकारी में एक मात्रा में कितनी मात्रा समाहित होती हैं?

6.6 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान चुके हैं कि संगीत के अभिन्न अंग व तालों की उत्पत्ति रागों की रंजकता को बढ़ाने के लिए हुई है। वर्तमान समय में उत्तरी भारत में अनेकों ताल प्रचलित हैं। जैसे – तीनताल, एकताल, चारताल, झपताल, रूपक, धमार, दीपचन्दी आदि। ताल के योग से संगीत में रसानुभूति क्षणिक न रहकर परमानन्द प्राप्ति के साधन में सहायता करती है। पहले गीत रचनाओं एवं तालों से सम्बन्धित सभी अव्यवों को कंठस्थ करना पड़ता था परन्तु काललिपि पद्धति के आने से इस क्षेत्र में क्रान्ति का सूत्रपात हो गया। संगीत के अन्तर्गत आने वाली समस्त स्वर–ताल बद्ध रचनाओं में लय एवं ताल के समस्त अंगों को समझना बेहद आसान हो गया है। गीत रचनाओं में जिस लय एवं ताल में संगत होती है उसमें समान रूप से कायम रहना परम आवश्यक है। विशेष रूप से ख्याल गायन में ताल पक्ष के लिए 'तबला' वाद्य में संगत की जाती है तथा ध्रुपद गायन में 'पखावज' वाद्य में संगत की जाती है। विभिन्न तालों की लयकारी में विभिन्न लयों के मध्यम से चमत्कार का प्रदर्शन किया जाता है। लयकारी द्वारा गीत रचनाओं एवं तालों में कुछ नवीनता आ जाती है जिससे गायन–वादन में नवीन सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है। इस इकाई के अध्ययन से आप लय–ताल एवं लयकारी के सम्बन्ध में सभी तत्वों के समुचित प्रयोग को समझ सकेंगे।

6.7 शब्दावली

- **थपिया बाज** : पखावज पर बजने वाली ताले खुले बोल की तालें होती हैं, जिन्हें थपिया बाज की ताल भी कहते हैं। पखावज वाद्य में थाप का विशेष महत्व है। गीला आटा लगाकर इसकी थाप में विशेष गूंज उत्पन्न हो जाती है। पूरी हथेली से बजने के कारण ही इसकी थाप का विशेष महत्व है और इसे थपिया बाज कहते हैं।
- **धमार गायन** : ध्रुपद एवं ख्याल गायन के मध्य अपनी स्थिति रखने वाला गायन धमार है। ध्रुपद शैली से गाया जाने वाला गीत का प्रकार धमार कहलाता है। विशेष रूप से राधा एवं कृष्ण इस गीत के गायक होते हैं तथा होली के अवसर पर ब्रज की होरी, राधा–कृष्ण एवं गोपियों की होरी, अबीर गुलाल, फाग, पिचकारियाँ, रंगों एवं भीगी चुनरियों का वर्णन इसमें होता है।

6.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

6.3 की उत्तरमाला :

2) एक शब्द में उत्तर दो :

(i) उत्तर : 0 (शून्य)

(ii) उत्तर : X (सम)

(iii) उत्तर : '|'(विभाग)

3)रिक्त स्थानों की पूर्ति करो :

(क) उत्तर : ताल (ख) उत्तर : आवर्तन (ग) उत्तर : 2, 3, 4

6.4 की उत्तरमाला :

2)रिक्त स्थानों की पूर्ति करो :

(क) उत्तर : 16 (ख) उत्तर : 1, 5 व 13 पर

3)एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) उत्तर : 4

(ii) उत्तर : 9 मात्रा पर

(iii) उत्तर : ख्याल गायन

6.5 की उत्तरमाला :

3) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) उत्तर : 13वीं

(ii) उत्तर : 2

6.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भातखण्डे, पंडित विष्णु नारायण, (1970), *हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग 1 एवं भाग 2,* संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, (1990), *राग परिचय भाग 2,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
3. गोवर्धन, श्रीमती शान्ति, (1995), *संगीत शास्त्र दर्पण भाग–2,* पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
4. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, (1993), *तबला प्रकाश भाग–1,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

6.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. श्रीवास्तव, आचार्य गिरीश चन्द्र, (1994), *ताल प्रभाकर प्रश्नोत्तरी,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. कौर, डॉ0 भगवन्त, *परम्परागत हिन्दुस्तानी सैद्धान्तिक संगीत,* कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

6.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भातखण्डे तालिलिपि पद्धति का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।
2. तीनताल एवं चारताल का सम्पूर्ण परिचय देते हुए इनकी दुगुन एवं चौगुन की लयकारियाँ लिखिए।